

पर जो फल आता है उसे क्षेत्रफल कहते हैं। जैसे चार हाथ लम्बे और पांच हाथ चौड़े क्षेत्रका क्षेत्रफल २० हाथ हुआ।

१५. प्र०—घन क्षेत्रफल कितने कहते हैं ?

उ०—जहाँ लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई तीनोंकी विवक्षा हो उसे घन क्षेत्र कहते हैं। और उसके क्षेत्रफलको खात फल या घन क्षेत्रफल कहते हैं। जैसे चार हाथ लम्बे, चार हाथ चौड़े और पांच हाथ ऊँचे क्षेत्रका खातफल $4 \times 4 \times 5 = 80$ हाथ हुआ।

१६. प्र०—व्यास या परिधि कितने कहते हैं ?

उ०—गोलाकार क्षेत्रके बीचमें जितना विस्तार होता है उसे व्यास कहते हैं और गोलाकार क्षेत्रकी गोलाईके प्रमाणको परिधि कहते हैं।

१७. प्र०—परिधि और क्षेत्रफलका क्या नियम है ?

उ०—माँटे तौर पर व्यास से त्रिगुनी परिधि होती है। और परिधिको व्यासकी चौलाईमें गुणा करने पर क्षेत्रफल होता है। तथा क्षेत्रफलको ऊँचाई या गहराईमें गुणा करने पर सामकज होता है।

१८. प्र०—मानके कितने भेद हैं ?

उ०—दो भेद हैं—लौकिक मान और लोकोत्तर मान।

१९. प्र०—लौकिक मान कितने कहते हैं ?

उ०—लोकमें प्रचलित मानको लौकिक मान कहते हैं। उनके छे भेद हैं—मान, उन्मान, अपमान, गणिमान, प्रतिमान और तत्प्रतिमान। अन्न वगैरह मापनेके यरतनोंको मान कहते हैं। तराजूको उन्मान कहते हैं। पुल्लू वगैरहको अवमान कहते हैं जैसे एक घुल्लू जल। एक आदिको गणिमान कहते हैं जैसे एक दो तीन। गुंजा आदिको प्रतिमान कहते हैं जैसे रत्ती गागा वगैरह। पोड़ेकी लम्बाई वगैरह देखाकर उसका मूल्यआँकना तत्प्रतिमान है।

२०. प्र०—लोकोत्तर मानके कितने भेद हैं ?

उ०—चार भेद हैं—द्रव्यमान, क्षेत्रमान, बालमान और भावमान। एक परमाणु जपन्य द्रव्यमान है और नव द्रव्योंका समूह उत्कृष्ट द्रव्यमान है। एक प्रदेश जपन्य क्षेत्रमान है और समस्त आकाश उत्कृष्ट क्षेत्रमान है। एक समय जपन्य बालमान है और सारेबाल उत्कृष्ट काश्मान है। मूढम निर्गोदिया लब्ध-

१७—वि० भा० भा० १७।

१८-१९—वि० भा० भा० ९। २०-२१—वि० भा० भा० ११-२। २२—अन्तमान के भेदोंका विस्तृत वक्ष्य आनेके लिये विशेषणार पाया १५-५१ देखो।

पर जो फल आता है उसे क्षेत्रफल कहते हैं। जैसे चार हाथ लम्बे और पांच हाथ चौड़े क्षेत्रका क्षेत्रफल २० हाथ हुआ।

१५. प्र०—घन क्षेत्रफल बिसे कहते हैं ?

उ०—जहाँ लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई तीनोंकी विचक्षा हो उसे घन क्षेत्र कहते हैं। और उसके क्षेत्रफलको खात फल या घन क्षेत्रफल कहते हैं। जैसे चार हाथ लम्बे, चार हाथ चौड़े और पांच हाथ ऊँचे क्षेत्रका खातफल $4 \times 4 \times 5 = 80$ हाथ हुआ।

१६. प्र०—व्यास या परिधि किसे कहते हैं ?

उ०—गोलाकार क्षेत्रके बीचमें जितना विस्तार होता है उसे व्यास कहते हैं और गोलाकार क्षेत्रको गोलाईके प्रमाणको परिधि कहते हैं।

१७. प्र०—परिधि और क्षेत्रफलका क्या नियम है ?

उ०—मोटे तौर पर व्यास से त्रिगुनी परिधि होता है। और परिधिको व्यासको चौलाईमें गुणा करने पर क्षेत्रफल होता है। तथा क्षेत्रफलको ऊँचाई या गहराईमें गुणा करने पर खातफल होता है।

१८. प्र०—मानके रितने भेद हैं ?

उ०—दो भेद हैं—लौकिक मान और लोकोत्तर मान।

१९. प्र०—लौकिक मान रितने कहते हैं ?

उ०—लोकमें प्रचलित मानको लौकिक मान कहते हैं। उसके छे भेद हैं—मान, उन्मान, अवमान, गणिमान, प्रतिमान और तत्प्रतिमान। अन्न बगैरह मापनेके धरतनोंको मान कहते हैं। तराजूको उन्मान कहते हैं। चुल्हू बगैरहको अवमान कहते हैं जैसे एक चुल्हू जल। एक आदिशे गणिमान कहते हैं जैसे एक दो तीन। गुंजा आदिशे प्रतिमान कहते हैं जैसे रस्ती मापना बगैरह। घोड़ेकी लम्बाई बगैरह देगकर उसका मूल्यआँवना तत्प्रतिमान है।

२०. प्र०—लोकोत्तर मानके रितने भेद हैं ?

उ०—चार भेद हैं—द्रव्यमान, क्षेत्रमान, वायुमान और भावमान। एक परमाणु जपन्य द्रव्यमान है और सब द्रव्योंका समूह उत्कृष्ट द्रव्यमान है। एक प्रदेश जपन्य क्षेत्रमान है और सम्मत् आवास उत्कृष्ट क्षेत्रमान है। एक समय जपन्य कालमान है और सर्वकाल उत्कृष्ट वायुमान है। मृदम निगोदिया लक्ष्य-

१७—वि० भा० पा० १७।

१८-१९—वि० भा० पा० १। २०-२१—वि० भा० पा० ११-१२। २२—अन्वयमान के भेदोंका विस्तृत स्वरूप आनेके लिये त्रिगोणकार पाया १५-५१ देखो।

च्छेद होते हैं। जैसे सोलहके अर्द्धच्छेद चार होते हैं क्योंकि सोलह राशि चार बार आधा-आधा हो सकती है—८, ४, २, १।

४१. प्र०—प्रतरांगुल किसे कहते हैं ?

उ०—सूच्यंगुलके वर्गको प्रतरांगुल कहते हैं।

४२. प्र०—घनांगुल किसे कहते हैं ?

उ०—सूच्यंगुलके घनको घनांगुल कहते हैं। सो एक अंगुल लम्बा, एक अंगुल चौड़ा, और एक अंगुल ऊँचा प्रदेशोका परिमाण जानना।

४३. प्र०—जगच्छ्रेणी किसे कहते हैं ?

उ०—पत्थरके अर्द्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग प्रमाण घनांगुलको रखकर उन्हें परस्परमें गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसे जगच्छ्रेणी कहते हैं। सो सात राजू लम्बी आकाशके प्रदेशोंकी वृत्ति प्रमाण जाननी चाहिये।

४४. प्र०—जगत्प्रतर या प्रतरलोक किसे कहते हैं ?

उ०—जगच्छ्रेणीके वर्गको अर्थात् जगत्श्रेणीको जगत्श्रेणीसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उसे जगत्प्रतर या प्रतरलोक कहते हैं। सो जगच्छ्रेणी प्रमाण लम्बे और चौड़े क्षेत्रमें जितने प्रदेश आयें उतना जानना चाहिये।

४५. प्र०—घनलोक किसे कहते हैं ?

उ०—जगत्श्रेणीके घनको लोक अथवा घनलोक कहते हैं। सो जगत्श्रेणी प्रमाण लम्बे चौड़े और ऊँचे क्षेत्रमें जितने प्रदेश आयें उतना जानना चाहिये।

४६. प्र०—राजू किसे कहते हैं ?

उ०—जगत्श्रेणीके सातवें भागको राजू कहते हैं।

•

२

४७. प्र०—लोक किसे कहते हैं ?

उ०—जितने आकाशमें धर्म अधर्म आदि छे द्रव्य पाये जाते हैं तथा जीव और पुद्गलोंका गमनागमन होता है उनमें आकाशको लोक अथवा लोकावास कहते हैं।

४८. प्र०—लोक कहाँपर स्थित है ?

उ०—जहाँ अग्नि, मणि, कृषि, वाणिज्य, विद्या और शिल्प इन छे कर्मोंकी प्रवृत्ति हो उमे कर्मभूमि कहते हैं।

६१. प्र०—कर्मभूमियाँ कितनी हैं ?

उ०—पाँच मेरु सम्बन्धी पाँच भरत, पाँच ऐरावत और देवकुरु उत्तरकुरुको छोड़कर पाँच विदेह इस प्रकार सब मिलकर १५ कर्मभूमियाँ हैं।

६२. प्र०—भोगभूमि कितने कहते हैं ?

जहाँ दस प्रकारके कल्पवृक्षोंसे प्राप्त भोगोंको ही भोगा जाता है और छे कर्मोंकी प्रवृत्ति नहीं है उसे भोगभूमि कहते हैं।

६३. प्र०—भोगभूमियाँ कितनी हैं ?

उ०—सब भोगभूमियाँ तीन हैं। जिनमेंसे पाँच मेरु सम्बन्धित, पाँच हैमवत और पाँच हैरण्यवत इन दस क्षेत्रोंमें जयन्त्य भोगभूमि है। पाँच हरि और पाँच रम्य इन दस क्षेत्रोंमें मध्यम भोगभूमि है। और पाँच देवकुरु और पाँच उत्तरकुरु इन दस क्षेत्रोंमें उत्तम भोगभूमि है।

६४. प्र०—दश भरतादि क्षेत्रोंमें सदा एक सी ही व्यवस्था रहती है ?

उ०—भरत और ऐरावत क्षेत्रोंमें जयन्तपिणी और उत्तपिणी बालके छे समयोंके द्वारा परिवर्तन हुआ करता है। दोष क्षेत्रोंमें सदा एक-ठा ही बाल चलता है।

६५. प्र०—जयन्तपिणी और उत्तपिणी बाल कितने कहते हैं ?

उ०—जित बालमें मनुष्य और त्रिपञ्चोत्री आमु घरीरकी ऊँचाई और विभूति आदि पड़ते रहते हैं उसे जयन्तपिणी बाल कहते हैं और जित बालमें वे पड़ते रहते हैं उन्हें उत्तपिणी बाल कहते हैं।

६६. प्र०—जयन्तपिणी और उत्तपिणी बालके छे भेद क्यों से हैं ?

उ०—गुणमागुणमा, गुणमा, गुणमा दुपमा, दुपमा गुणमा, दुपमा और अति-दुपमा ये छे जयन्तपिणी बालके भेद हैं और अतिदुपमान गुणमागुणमा पदमे छे भेद उत्तपिणी बालके हैं।

६७. प्र०—भरत क्षेत्रमें परिवर्तनका क्रम क्या है ?

उ०—गुणमागुणमा बालके आदिमें भरत क्षेत्रमें उत्तम भोग-भूमि रहती है। गुणमागुणमा बालका प्रमाण चार बोज़बोड़ो मान्य है। फिर क्रमसे हानि होती होती गुणमा बालका आरम्भ होता है। उसमें मध्यम भोगभूमि रहती है उसका प्रमाण तीन बोज़बोड़ो मान्य है। फिर क्रमसे हानि होती होती गुणमा-

भूमिका आरम्भ होने लगता है। उस कालमें प्रथम तीर्थंकर और प्रथम चक्रवर्ती भी उत्पन्न हो जाते हैं। कुछ जीव मोक्ष भी चले जाते हैं। चक्रवर्तीका मान भंग होता है, यह एक नये वर्ण ब्राह्मणकी रचना करता है। चौथे दुपमासुपमा कालमें ६२ मेसे ५८ शलाका पुरर ही जन्म लेते हैं। नौवेंसे सोलहवें तीर्थंकर तक सात तीर्थंकरोंके तीर्थंम धर्मका विच्छेद हो जाता है। सातवें, तेईसवें और अन्तिम तीर्थंकरपर ठपसग होता है। ग्यारह रद्र और नौ नारद होते हैं। पांचवें दुपमा कालमें चाण्डाल आदि जातियां तथा कर्त्तवी उपवर्त्तकी होते हैं। ये अनेक नई बातें हुण्डावसपिणी कालमें होती हैं।

६१. प्र०—प्रेसठ शलाका पुरुष सिन्हें कहते हैं ?

उ०—चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलभद्र, नौ नारायण और नौ प्रतिनारायण ये प्रेसठ शलाका पुरुष अर्थात् गणनीय महापुरुष कहे जाते हैं।

७०. प्र०—चौबीस तीर्थंकरोंके नाम क्या हैं ?

उ०—ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपाश्व, चन्द्र-प्रभ, पुण्डन्त, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्धु, अर, मल्लि, मुनिमुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और वर्द्धमान ये भरत क्षेत्रमें उत्पन्न हुए चौबीस तीर्थंकरोंके नाम हैं।

७१. प्र०—चौबीस तीर्थंकरोंका जन्म स्थान कहाँ है ?

उ०—ऋषभनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दन नाथ, सुमतिनाथ, और अनन्त नाथका जन्मस्थान अयोध्या है। सम्भवनाथका जन्मस्थान श्रावस्ती नगरी है, पद्मप्रभका जन्मस्थान कौशाम्बी है, सुपाश्व और पार्श्वनाथका जन्मस्थान वाराणसी (बनारस) है, चन्द्रप्रभका जन्मस्थान चन्द्रपुरी और श्रेयासनाथका जन्मस्थान सिंहपुरी (बनारसके पास गारनाथ) है। पुण्डन्तका जन्म स्थान वावन्दी, शीतलनाथका भदलपुर (भेतसा), वासुपूज्यका चम्पानगरी, विमल नाथका कपिला, धर्मनाथका रत्नपुरी (जयौध्याके पास), शान्ति, कुन्धु और अरनाथका हस्तिनापुर, माल्लनाथ और नमिनाथका मिथिलापुरी, नमिनाथका शोरीपुर (यटेश्वरके पास), मुनिमुव्रतनाथका राजगृह और वर्द्धमानका जन्मस्थान कुण्डलपुर है।

७२. प्र०—चौबीस तीर्थंकरोंके निर्वाणस्थान कौनसे हैं ?

उ०—भगवान् ऋषभदेवका निर्वाणस्थान कैलाश पर्वत है, वासुपूज्यका चम्पापुर, नेमिनाथका गिरनार पर्वत और महावीर वर्द्धमानका निर्वाणस्थान पावापुरी है। और शेष तीर्थंकरोंकी निर्वाण-भूमि सम्मेल सिगर पर्वत है।

१२३ प्र०—विशोदयन किसे कहते हैं ?

उ०—अमृतानुप्राप्तों कोष माना जाता था जहाँ कभी वायुवायुमयों का रहना और न तो मोक्षसाधन परिलक्षितों के निर्वोदय कहते हैं ।

१२४ प्र०—अधःकरण किसे कहते हैं ?

उ०—जिन करणों के कारणों में वर्तमान जीवों के परिणाम जैसी विशोदयनाको जिये हुए हों, वेही ही विमुक्तता को जिये हुए परिणाम जीवों के समान वर्तमान जीवों के भी होते हैं। यह अमृतानुप्राप्त कहते हैं । जैसा, दो जीवों के एक साथ अधःप्रवृत्तकरणों का समान विना । विशेष अति समय को लेकर उनमें से एक जीवों के परिणाम जैसी विमुक्तता को जिये हुए होते हैं, दूसरे जीवों के वही विमुक्तता को जिये हुए परिणाम प्रथम समयों भी होते हैं । इस प्रकार इन करणों में ऊपर और नीचे के समय समानों परिणामों की समानता और समानता होने से इसे अधःप्रवृत्तकरण कहते हैं । इसका काल अन्तर्मुहूर्त है ।

१२५ प्र०—अपूर्वकरण किसे कहते हैं ?

उ०—जिनमें प्रति समय अपूर्व अपूर्व परिणाम हों उसे अपूर्वकरण समस्थान कहते हैं । सारांश यह है कि इन करणों के कारणों में स्थित जीवों के और नीचे के समयों में स्थित जीवों के परिणाम कभी भी समान नहीं होते । किन्तु एक ही समय में स्थित जीवों के परिणाम समान भी होते हैं और समान नहीं भी होते । जैसे, जिन जीवों को अपूर्वकरण में आये पाँचवों समय हैं, उन जीवों के जैसे परिणाम होते हैं वैसे परिणाम जिन जीवों को अपूर्वकरण में आये एक दो तीन या चार अथवा छे समय हुए हैं, उनके कभी भी नहीं होते । तथा पाँचवों समय में वर्तमान जीवों के परिणाम परस्पर में समान भी होते हैं और नहीं भी होते । इसका काल भी अन्तर्मुहूर्त है ।

१२६ प्र०—अधःकरण और अपूर्वकरण में क्या अन्तर है ?

उ०—अधःकरण में भिन्न-भिन्न समयों में वर्तमान जीवों के परिणामों में जैसे समानता होती है अपूर्वकरण में वह नहीं होती । तथा अधःकरण में जैसे एक समय में स्थित जीवों के परिणामों में समानता और असमानता दोनों होती हैं वैसे अपूर्वकरण में भी होती है ।

१३१ प्र०—अनिवृत्तिकरण किताको कहते हैं ?

उ०—जिस कारणसे निम्न समयवर्ती जीवोंके परिणाम अगमान ही होते हैं और एक समयवर्ती जीवोंके परिणाम समान ही होने हैं, उसको अनिवृत्तिकरण कहते हैं। जैसे, जिन जीवोंको अनिवृत्तिकरणसे आये हुए पचिवाँ समय है उन त्रिकालवर्ती जीवोंके परिणाम परम्परमे समान ही होते हैं, हीन अधिक नहीं होते। तथा वे परिणाम, जिन जीवोंको अनिवृत्तिकरणसे आये हुए बीया समय हुआ है, उनके विगुण परिणामोंमें अनन्तगुण विगुण होते हैं। इसी तरह जिन जीवोंको अनिवृत्तिकरणसे आये हुए छठा समय हुआ है, उनके परिणाम पचिवाँ समयवर्ती जीवोंके विगुण परिणामोंसे अनन्तगुण विगुण होते हैं। इसी तरह सबसं जानना।

१३२ प्र०—सूक्ष्म साम्प्रदाय गुणस्थानका क्या स्वरूप है ?

उ०—जिस गुणस्थानमें अत्यन्त सूक्ष्म अवस्थाको प्राप्त लोभ कषाय मात्रका उदय होय रहता है उसको सूक्ष्म साम्प्रदाय नामका दमवाँ गुणस्थान कहते हैं।

१३३ प्र०—उपशान्त कषाय गुणस्थानका क्या स्वरूप है ?

उ०—जैसे गदगे पानीमें फटकने से पानी ऊपरमें निर्मल हो जाता है और गाद उसके नीचे बैठ जाती है वैसे ही जिस जीवका मोहनीय बर्म पूरी तरहसे उपशान्त हो जाता है, वह जीव उपशान्त कषाय नामक दमवाँ गुणस्थानवाला पड़ा जाता है। इस गुणस्थानका पान्द अन्तर्मूर्त है। काल पूरा हो जानेपर मोहनीयरा उदय हो आता है जिससे इस गुणस्थानवाला जीव गिरकर नीचेके गुणस्थानोंमें आ जाता है।

१३४ प्र०—क्षीण कषाय गुणस्थानका क्या स्वरूप है ?

उ०—मोहनीय बर्मकी समस्त प्रवृत्तिघोरा क्षय हो जानेसे जिसका चित्त स्फटिकके पान्दमें रगे हुए जड़के समान निर्मल होता है उसको क्षीण कषाय गुणस्थानवाला कहते हैं।

१३५ प्र०—उपशान्त कषाय और क्षीण कषायमें क्या अन्तर है ?

उ०—उपशान्त कषाय जीवके यद्यपि मोहरा उदय नहीं है फिर भी मोहनीय बर्मकी गत्ता है किन्तु क्षीण कषाय जीवके मोहनीय बर्मका उदय भी नहीं है और अस्तित्व भी नहीं है। फिर भी दोनों ही परिणामोंमें कषायोद्वा अभाव है अतः दोनों कषायस्वभाव धारित होता है और दोनों ही बाह्य और अन्तर्परिपक्व रहित होनेके कारण निर्धन्य कहे जाते हैं।

१३६ प्र०—साधोय केदो गुणस्थानका क्या स्वरूप है ?

१४०. प्र०—किस गुणस्थानमें मरकर जीव किस गतिमें जाता है ?

उ०—पहले और चौथे गुणस्थानमें मरकर जीव चाहे मत्तियोंमेंसे किसी भी गतिमें जा सकता है। साक्षात्तमें मरकर नरक गतिमें नहीं जाता। मत्तियोंमेंसे किसी भी गतिमें जा सकता है। चौदहवें गुणस्थानमें मुक्ति होती है। और मत्तियों में सात गुणस्थानोंमें मरकर जीव नियममें देखनेमें जन्म लेता है।

१४१. प्र०—किन व्यवस्थाओंमें मरण नहीं होता ?

उ०—मिश्र कायस्थानों, प्रथमोपशम गन्धर्वराज, जीव मानवें नरकमें दूसरे आदि गुणस्थानोंमें वर्तमान जो चोकरा मरण नहीं होता। अनन्तानुप्रस्थीरा विसंयोजन करके जो जीव मिश्रान्व गुणस्थानमें जा जाता है मरण अनन्तमूर्तन तक उसका मरण नहीं हो सकता। वर्तमान मोहका क्षय वर्तमानात्र तब तक कृतकृत्य नहीं हो जाता तब तक उसका मरण नहीं होता।

१४२. प्र०—जीव समास कितने कहते हैं ?

उ०—जिनके द्वारा अथवा जिनमें भव मरणात्त आधारा गच्छ स्थित जाना है उन्हें जीवसमास कहते हैं।

१४३. प्र०—संक्षेपसे जीवसमासके कितने भेद हैं ?

उ०—चौदह भेद हैं—एकेंद्रियके दो भेद—बाह्य और मध्य, विहेंद्रियके तीन भेद—दोऽन्द्रिय तेऽन्द्रिय और चोऽन्द्रिय तथा पञ्चेंद्रियके दो भेद—सैनी और अनेनी। ये सात्त्विक पर्याप्त और अर्थात्तव भेदों दो प्रकारके होते हैं।

१४४. प्र०—विस्तारसे जीवसमासके कितने भेद हैं ?

उ०—अष्टानवें—एकेंद्रियके ब्यालीन, विहेंद्रियके नौ, पञ्चेंद्रियके सैनालीन।

१४५. प्र०—एकेंद्रियके ब्यालीन भेद कौनसे हैं ?

उ०—पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, और साधारण वनस्पतिकायिकके दो भेद निम्ननिर्गोद और हनर्गनिर्गोद में छटा बाहर भी होते हैं और मूढम भी होते हैं अतः बारह भेद हुए। तथा प्रत्येक वनस्पतिकायिकके दो भेद हैं—सप्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित। ये चौदहों पर्याप्त, निर्वृत्तपर्याप्त और लब्धपर्याप्तके भेदसे तीन-तीन प्रकारके होते हैं। इस तरह एकेंद्रियके ४२ जीवसमास होते हैं ?

१४६. प्र०—विहेंद्रियके नौ भेद कौनसे हैं ?

उ०—दोऽन्द्रिय, तेऽन्द्रिय और चोऽन्द्रियके पर्याप्त, निर्वृत्तपर्याप्त और लब्धपर्याप्तके नौ जीवसमास होते हैं ?

१५२. प्र०—नारदियोंके दो भेद कौनसे हैं ?

उ०—पर्याप्तक और निर्वृत्त्यपर्याप्तक ।

१५३. प्र०—देवोंके दो भेद कौनसे हैं ?

उ०—पर्याप्तक और निर्वृत्त्यपर्याप्तक ।

१५४. प्र०—पर्याप्तक किसे कहते हैं ?

उ०—जिस जीवकी शरीरपर्याप्ति पूर्ण हो गई है उसको पर्याप्तक कहते हैं ।

१५५. प्र०—निर्वृत्त्यपर्याप्तक किसे कहते हैं ?

उ०—जब तक जीवकी शरीरपर्याप्ति पूर्ण न हुई हो, किन्तु नियमसे पूर्ण होनेवाली हो, तब तक उस जीवको निर्वृत्त्यपर्याप्तक कहते हैं ।

१५६. प्र०—लक्ष्यपर्याप्तिक किसे कहते हैं ?

उ०—जिस जीवकी एक भी पर्याप्ति पूर्ण न हो और द्वासके अट्टारहवें भागमें ही मरण होनेवाला हो उसको लक्ष्यपर्याप्तिक कहते हैं ।

१५७. प्र०—पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—आहार वर्गणा, भाषा वर्गणा, और मनोवर्गणाके परमाणुओंको शरीर आदि रूप परिणमानेकी शक्तिकी पूर्णताको पर्याप्ति कहते हैं ।

१५८. प्र०—पर्याप्तिके कितने भेद हैं ?

उ०—पर्याप्तिके छे भेद हैं—आहार पर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रिय पर्याप्ति, द्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, भाषापर्याप्ति और मन.पर्याप्ति ।

१५९. प्र०—आहार पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—आहारवर्गणाने परमाणुओंको रस और रसभाग रूप परिणमानेकी कारणभूत जीवकी शक्तिकी पूर्णताको आहारपर्याप्ति कहते हैं ।

१६०. प्र०—शरीरपर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—जिन परमाणुओंको छल रूप परिणमाया या उनको हाड़ वगैरह कठिन अवयवरूप और जिनको रसरूप परिणमाया या उनको रश्मि आदि रूप परिणमानेकी कारणभूत जीवकी शक्तिकी पूर्णताको शरीर पर्याप्ति कहते हैं ।

१६१. प्र०—इन्द्रिय पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—आहारवर्गणाने परमाणुओंको इन्द्रियके आकाररूप परिणमानेमें तथा इन्द्रिय द्वारा विषय ग्रहण करनेमें कारणभूत जीवकी शक्तिकी पूर्णताको इन्द्रिय-पर्याप्ति कहते हैं ।

१६२. प्र०—द्वासोच्छ्वास पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—आहार वर्गणाके परमाणुओंको द्वासोच्छ्वास रूप परिणमानेमें कारणभूत जीवकी शक्तिकी पूर्णताको द्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं ।

१६३. प्र०—भाषा पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—भाषावर्गणाने परमाणुओंको वचनरूप परिणमानेमें कारणभूत जीवकी शक्तिकी पूर्णताको भाषा पर्याप्ति कहते हैं ।

१६४. प्र०—मन.पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—मनोवर्गणा के परमाणुओंको द्रव्य मनरूप परिणमानेमें तथा उनके द्वारा गुण दोषका विचार, चीन्ती बानका स्मरण आदि कार्य करनेमें कारणभूत जीवकी शक्तिकी पूर्णताको मन.पर्याप्ति कहते हैं ।

१७०—लक्ष्यपर्याप्त जीव एक जन्तुसंसार में कितने जन्म धारण करता है ?

उ०—छियागठ हजार योन भी जन्मी ।

१७१. प्र०—योनि कितने कहते हैं ?

उ०—जीवके उत्पत्ति स्थानको योनि कहते हैं ।

१७२. प्र०—योनिके कितने भेद हैं ?

उ०—दो, आकार योनि और गुण योनि ।

१७३. प्र०—आकार रूप योनिके कितने भेद हैं ?

उ०—स्त्रीके शरीरमें होनेवाली आकार रूप योनिके तीन भेद हैं—जंतावत योनि, कूर्मोन्नत योनि और वंशपत्र योनि ।

१७४. प्र०—किस योनिमें कीन उत्पन्न होता है ?

उ०—शंखावर्तक योनिमें तो गर्भ नहीं रहता । कूर्मोन्नत योनिमें तीव्रचक्र, चक्रवर्ती, नारायण आदि उत्पन्न होते हैं और वंशपत्र योनिमें जनसाधारण उत्पन्न होते हैं ।

१७५. प्र०—गुण धोनिके कितने भेद हैं ?

उ०—ती सचित्त, अचित्त, सचित्ताचित्त, शीत, उष्ण, शीतोष्ण, संवृत, विवृत, संवृतविवृत ।

१७६. प्र०—सचित्त आदिका क्या स्वरूप है ?

उ०—चेतन सहित पुद्गल स्कन्धको सचित्त कहते हैं । उससे विपरीतको अचित्त कहते हैं । जो पुद्गल स्कन्ध सचित्त अचित्त दोनों रूप होते हैं उन्हें सचित्ताचित्त कहते हैं । शीत स्पर्शसे युक्त पुद्गल स्कन्धको शीत कहते हैं । उष्ण स्पर्शसे युक्त पुद्गल स्कन्धको उष्ण कहते हैं । जो पुद्गल उभय रूप हों उन्हें शीतोष्ण कहते हैं । जिस पुद्गल स्कन्धका आकार गुप्त होता है, जिससे उसे देखा नहीं जा सकता, उसे संवृत कहते हैं । जिसको देखा जा सकता है उसे विवृत कहते हैं । और जो दोनों रूप हो उसे संवृतविवृत कहते हैं ।

१७७. प्र०—किस जन्मवालोंकी कौन योनि होती है ?

उ०—उपपाद जन्मवालोंकी अचित्त, शीत या उष्ण और संवृत योनि होती है । गर्भ जन्मवालोंकी सचित्ताचित्त, शीत उष्ण या शीतोष्ण और संवृत योनि होती है । सम्मूढन जन्मवालोंकी सचित्त अचित्त या सचित्ताचित्त, शीत उष्ण या शीतोष्ण और संवृत अथवा विवृत योनि होती है । इनका विशेष है कि तेजःस्वायिक जीवोंकी योनि उष्ण ही होती है । तथा ऐवेन्द्रियोंकी योनि संवृत और विकलेन्द्रियोंकी विवृत होती है ।

१७८. प्र०—योनि और जन्ममें क्या भेद है ?

उ०—योनि आधार है, जन्म आधेय है, क्योंकि सचित्त आदि योनियोंमें जीव सम्मूढन आदि जन्म लेकर उत्पन्न होता है ।

१७९. प्र० - विस्तारसे योनिके भेद कितने हैं ?

उ०—विस्तारसे योनिके भेद चौरागी लाख हैं—नित्यनिगोद, अनित्यनिगोद, पृथ्वीवायिक, जलवायिक, तेजस्वायिक और वायुवायिक इन छहोंमेंसे प्रत्येककी सात सात लाख योनियाँ हैं । प्रत्येक वनस्पतिकी दस लाख योनियाँ हैं । दोन्द्रिय और चोन्द्रियमेंसे प्रत्येककी दो दो लाख योनियाँ हैं । देव नारकी और पद्मेन्द्रिय त्रिपद्मेन्द्रियमेंसे प्रत्येककी चार चार लाख योनियाँ हैं और मनुष्योंकी षोडश लाख योनियाँ हैं ।

१८०. प्र०—जन्मके कितने भेद हैं ?

उ०—तीन - सम्मूढन जन्म, गर्भ जन्म और उपपाद जन्म ।

१८६. प्र०—कौनसे जीवोंके कौन निम्न होता है ?

उ०—नारकी और गम्भीर जीवोंके नमोक्त निम्न ही होता है। क्योंकि पुल्लिग और खोलिग ही होता है, और जीवोंके जीवोंके कोई भी निम्न होता है।

१८७. प्र०—प्राण किसे कहते हैं ?

उ०—जिनके संयोगसे यह जीव जीवित अवस्थाको और विनोदसे मरण अवस्थाको प्राप्त होता है उन्हें प्राण कहते हैं।

१८८. प्र०—प्राणके कितने भेद हैं ?

उ०—दो हैं—द्रव्यप्राण और भावप्राण।

१८९. प्र०—द्रव्यप्राण किसको कहते हैं ?

उ०—पुद्गलद्रव्यसे उत्पन्न हुए द्रव्य इन्द्रिय वगैरहकी प्रवृत्तिको द्रव्यप्राण कहते हैं।

१९०. प्र०—भावप्राण किसे कहते हैं ?

उ०—आत्माकी जिस शक्तिके निमित्तसे इन्द्रिय वगैरह अपने कार्यमें प्रवृत्त हों, उसे भावप्राण कहते हैं।

१९१. प्र०—द्रव्यप्राणके कितने भेद हैं ?

उ०—दस हैं—मन, बचन, वाय, स्पर्शनइन्द्रिय, रमनाइन्द्रिय, घ्राणइन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, श्रोत्रइन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास और आयु।

१९२. प्र०—किस जीवके कितने प्राण होते हैं ?

उ०—सैनी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्ति जीवके दसों प्राण होते हैं। असैनी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तिके मनके बिना नौ प्राण होते हैं। चौइन्द्रियके मन और श्रोत्र इन्द्रियके बिना आठ प्राण होते हैं। त्रैइन्द्रियके मन, श्रोत्र और चक्षुइन्द्रियके बिना सात प्राण होने हैं। द्वैइन्द्रियके मन, श्रोत्र, चक्षु और घ्राण इन्द्रियके बिना छे प्राण होने हैं। एकेन्द्रियके स्पर्शनइन्द्रिय, वायबल, श्वासोच्छ्वास और आयु ये चार प्राण होते हैं। यह पर्याप्ति अवस्थाकी अपेक्षा जानना। अर्थात् दशमें सैनी और असैनी पञ्चेन्द्रियके सात प्राण ही होने हैं, क्योंकि श्वासोच्छ्वास, बचनबल और मनोबल में तीन प्राण पर्याप्ति दशमें ही होने हैं। चौइन्द्रियके श्रोत्रके बिना छे, त्रैइन्द्रियके चक्षुके बिना पाँच, द्वैइन्द्रियके घ्राणके बिना चार और एकेन्द्रिय अपर्याप्तिके रमनाके बिना तीन ही प्राण होते हैं।

१९३. प्र०—पर्याप्ति और प्राणमें क्या भेद है ?

उ०—पर्याप्ति कारण है, प्राण कार्य है।

१९४. प्र०—संज्ञा किसे कहते हैं ?

उ०—याछा (चाह) की संज्ञा कहते हैं।

१९५. प्र०—संज्ञाके कितने भेद हैं ?

उ०—चार हैं—आहार, भय, मेघुन और परिग्रह।

१९६. प्र०—उपयोग किसे कहते हैं ?

उ०—जीवके लक्षणरूप परिणामरूप, जो चेतन्यके होनेपर ही होता है, उपयोग कहते हैं।

१९७. प्र०—उपयोगके कितने भेद हैं ?

उ०—दो हैं—मात्सर उपयोग और अमात्सर उपयोग।

१९८. गो० जो०, गा० १३०।

२०३. प्र०—गतिके कितने भेद हैं ?

उ०—चार हैं—नरकगति, त्रिभुजगति, मनुष्यगति और देवगति ।

२०४. प्र०—कित्त गतिमें कितने गुणस्थान होते हैं ?

उ०—देवगति और नरकगतिमें आदिके चार गुणस्थान होते हैं, त्रिभुज-गतिमें आदिके पांच गुणस्थान होते हैं, और मनुष्यगतिमें चौरह गुणस्थान होते हैं ।

२०५. प्र०—इन्द्रिय किसको कहते हैं ?

उ०—आत्माके चित्त विशेषको इन्द्रिय कहते हैं ।

२०६. प्र०—इन्द्रियके कितने भेद हैं ?

उ०—दो हैं—द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय ।

२७०. प्र०—गोमूत्रिका गति किसको कहते हैं ?

उ०—श्रेष्ठ मायका बलसे हुए मूल वेदना अनेक मोड़ोंवाला होता है। उसी प्रकार तीन मोड़ेवाली गति को गोमूत्रिका कहते हैं। यह भी चार समुद्घातों होती है।

२७१. प्र०—चार मोड़ेवाली गति क्यों नहीं होती ?

उ०—लोकके मध्यसे लेकर ऊपर, नीचे और चारों ओर से विद्यमान आकाश के प्रदेशोंकी पंक्तिको श्रेणि कहते हैं। इन श्रेणियों अनुसार ही जीवों का गमन होता है। श्रेणिका उल्लंघन करने गमन नहीं होता। इसलिये ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँपर पहुँचनेके लिए चार मोड़ लेने पड़ें।

२७२. प्र०—समुद्घात किसे कहते हैं ?

उ०—मूल शरीरको बिना छोड़े जीवके प्रदेशोंके बाहर निकलनेको समुद्घात कहते हैं।

२७३. प्र०—समुद्घातके कितने भेद हैं ?

उ०—सात भेद हैं—वेदना समुद्घात, कपाय समुद्घात, विक्रिया समुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात, तैजस समुद्घात, आहारक समुद्घात और केवली समुद्घात।

२७४. प्र०—वेदना समुद्घात वगैरहका क्या स्वरूप है ?

उ०—बहुत पीड़ाके निमित्तसे आत्मप्रदेशोंके बाहर निकलनेको वेदना समुद्घात कहते हैं। क्रोध आदि कपायके निमित्तसे आत्मप्रदेशोंके बाहर निकलनेको कपाय समुद्घात कहते हैं। विक्रियाके निमित्तसे आत्मप्रदेशोंके बाहर निकलनेको विक्रिया समुद्घात कहते हैं। मरण होनेसे पहले नवीन पर्याय धारण करनेके क्षेत्र पर्यन्त प्रदेशोंके बाहर निकलनेको मारणान्तिक समुद्घात कहते हैं। अशुभ या शुभ तैजसके साथ आत्मप्रदेशोंके बाहर निकलनेको तैजस समुद्घात कहते हैं। प्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिके आहारक शरीरके साथ आत्मप्रदेशोंके बाहर निकलनेको आहारक समुद्घात कहते हैं। और केवलज्ञानीके समुद्घातको केवली समुद्घात कहते हैं।

२७५. प्र०—केवली समुद्घात क्यों करते हैं ?

उ०—आयु कर्मकी स्थितिसे अन्य तीन कर्मोंकी स्थिति अधिक होनेपर उनकी स्थिति भी आयु कर्मके समान करनेके लिए केवली समुद्घात करते हैं।

२७६. प्र०—सभी केवली समुद्धात करते हैं क्या ?

उ०—यतिपुत्र आचार्यके मतसे सभी केवली समुद्धात करते ही मुक्त होते हैं। अन्य आचार्यके मतसे कुछ केवली समुद्धात करते हैं और कुछ नहीं करते।

२७७. प्र०—केवली समुद्धातमें कितना समय लगता है।

उ०—केवली समुद्धातमें आठ समय लगते हैं—पहले समयमें आत्मप्रदेशोंको पंजाकर दण्डके आकार करने हैं। दूसरे समयमें वषाटके आकार करने हैं। तीसरे समयमें प्रवरूप करते हैं और चौथे समयमें आत्मप्रदेशोंमें लोकको प्रर देने हैं। पाँचवें समयमें लोचपूरणने प्रवरूप, छठमें प्रवरमें वषाटरूप, सातवें वषाटमें दण्डरूप और आठवेंमें फिरसे शरीरमें प्रविष्ट हो जाते हैं।

२७८. प्र०—एक बालमें योग कितने होते हैं ?

उ०—एक बालमें एक जीवके एक ही योग होता है।

२७९. प्र०—वेद कितने बहने हैं ?

उ०—चारित्र मोहनीयके भेद पुराणवेद, श्रुतिवेद और ननुगववेदका मोहनायके उदयमें उदयप्र हृद मंजुनकी अभिप्रायको भाववेद बहने हैं। और सामकमें उदयमें शरीरमें प्रकट होनेवाले विज्ञ विज्ञानको इन्द्रियवेद बहने हैं।

२८०. प्र०—वेदके विषयमें भेद हैं ?

उ०—तीन हैं—पुराणवेद, श्रुतिवेद और ननुगववेद।

२८१. प्र०—भाववेद और इन्द्रियवेद समान ही होते हैं या भिन्न ?

उ०—देव, गारुडी, भोगभोग या निर्दम और मनुजोंके उपाय इन्द्रियवेद होता है और भाववेद भी होता है। विष्णु ब्रह्मभूमिमा मनुज और निर्दमोंके विष्णु के ती जेगा इन्द्रियवेद होता है और भाववेद होता है और विष्णु इन्द्रियवेद होता है और भाववेद होता है।

२८२. प्र०—भाववेद क्या गुणवान तक होता है ?

उ०—जीवें गुणवानके भाववेद भाग दण्ड होता है। दण्ड बहने भेद वेद-रहित होते हैं।

२८३. प्र०—विज्ञानोंमें भिन्नता किह होता है ?

उ०—गारुडी ननुगववेदी ही होते हैं। देवोंके भाववेद गुण होते हैं वेद वेद हैं। मनुज और निर्दमोंके तीनों वेद पाते जाते हैं।

२८४. प्र०—वषाट कितने बहने हैं ?

उ०—दो भाववेद वषाटकी शेषका वषाट वषाट है उन्हें वषाट बहने हैं।

२९९. प्र०—अक्षरात्मक श्रुतज्ञान किसको कहते हैं ?

उ०—जो श्रुतज्ञान अक्षरोंके निमित्तसे उत्पन्न नहीं होता किन्तु अंग (निमित्त) के निमित्तसे उत्पन्न होता है उसे अनक्षरात्मक अथवा निमित्त श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे शीतलवायुका स्पर्श होनेपर शीतलवायुका जानना तो गतिज्ञान है और उसके पश्चात् ही वातप्रकृतिवालेको यह शीतलवायु हानिकर है ऐसा जानना अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है।

३००. प्र०—अक्षरात्मक श्रुतज्ञान किसको कहते हैं ?

उ०—अक्षररूप शब्दके निमित्तसे उत्पन्न होनेवाले श्रुतज्ञानको अक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहते हैं। जैसे, जीव हैं ऐसा करने पर श्रौंग्रिमिके द्वारा जो शब्दका ज्ञान हुआ वह तो गतिज्ञान है, और उस ज्ञानके पश्चात् जीव नामक पदार्थ है ऐसा जो ज्ञान हुआ वह अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है।

३०१. प्र०—अक्षरात्मक श्रुतज्ञानके कितने भेद हैं ?

उ०—दो भेद हैं—एक अंगप्रविष्ट और दूसरा अंगवाह्य।

३०२. प्र०—अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान किसको कहते हैं ?

उ०—भगवान् तीर्थङ्करने केवलज्ञानके द्वारा सब पदार्थोंको जानकर दिव्य ध्वनिके द्वारा उपदेश दिया। उनके साक्षात् शिष्य गणधरने उस उपदेशको अपनी स्मृतिमें रखकर बारह अंगोंमें संकलित किया। यह अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान है।

३०३. प्र०—अंगवाह्य श्रुतज्ञान किसको कहते हैं ?

उ०—आचार्योंने अल्पबुद्धि शिष्योंपर दया करके उन अंग ग्रन्थोंके आधार पर जो ग्रन्थ रचे वे अंगवाह्य कहलाते हैं।

३०४. प्र०—अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञानके भेद कितने हैं ?

उ०—बारह हैं—आचार, सूत्रकृत, स्थान, समवाय, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञातृ-धर्मकथा, उपासकाध्ययन, अन्तःकृद्दश, अनुत्तरोपपादिकदश, प्रश्नव्याकरण, विपाकसूत्र, दृष्टिवाद।

३०५. प्र०—बारहवें दृष्टिवाद अंगके कितने भेद हैं ?

उ०—पाँच भेद हैं—परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व और चूलिका।

३०६. प्र०—पूर्वके कितने भेद हैं ?

३०४—अंग प्रविष्ट श्रुतज्ञानके बारह भेदोंमें किन्-किन् विषयोंका वर्णन है यह जानने के लिए देखो—जयघवला, १ भाग पृ० १२२-१३२।

उ०—सामायिक अथवा छेदोस्थापना संयमको धारण करनेवाले मुनिकी कपाय जब अत्यन्त सूक्ष्म हो जाती है तब ये सूक्ष्मसाम्पराय संयमी कहे जाते हैं ।

३३४. प्र०—यथाख्यात संयम किसको कहते हैं ?

उ०—समस्त मोहनीयकर्मके उपशमसे अथवा क्षयसे जैसा आत्माका निर्विकार स्वभाव है वैसा ही स्वभाव हो जाना यथाख्यात चारित्र्य है ।

३३५. प्र०—संयमासंयम किसको कहते हैं ?

उ०—सम्यग्दर्शनपूर्वक पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतोंके धारण करनेको संयमासंयम कहते हैं ।

३३६. प्र०—असंयम किसको कहते हैं ?

उ०—जोव हिंसा और इन्द्रियोंके विषयोंसे विरत न होनेको असंयम कहते हैं ।

३३७. प्र०—किन गुणस्थानोंमें कौन सा संयम होता है ?

उ०—सामायिक और छेदोपस्थापना छेदसे नीचे गुणस्थान तक होते हैं । परिहारविशुद्धि छेद और सातवें गुणस्थानमें होता है । सूक्ष्मसाम्पराय संयम केवल दसवें गुणस्थानमें होता है । यथाख्यात संयम ग्यारहसे लेकर चौदहवें गुणस्थान तक होता है । संयमासंयम पाँचवें गुणस्थानमें होता है और असंयम आदिके चार गुणस्थानमें होता है ।

३३८. प्र०—दर्शन किसको कहते हैं ?

उ०—सामान्य विशेषात्मक बाह्य पदार्थोंको अलग-अलग भेद रूपसे ग्रहण न करके जो सामान्य ग्रहण होता है उसको दर्शन कहते हैं । अर्थात् विषय और विषयीके योग्य देशमें होनेकी पूर्वावस्थाको दर्शन कहते हैं ।

३३९. प्र०—दर्शन कब होता है ?

उ०—ज्ञानके पहले दर्शन होता है । विना दर्शनके अल्पज्ञानियोंको ज्ञान नहीं होता । परन्तु सर्वज्ञ देवके ज्ञान और दर्शन एक साथ होते हैं ।

३४०. प्र०—दर्शनके कितने भेद हैं ?

उ०—चार—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन ।

३४१. प्र०—चक्षुदर्शन किसको कहते हैं ?

उ०—चक्षु इन्द्रियसे होनेवाले मतिज्ञानके पहले जो सामान्य ग्रहण होता है उसे चक्षुदर्शन कहते हैं ।

२४२ प्र०—अबोधदर्शन किमयी कहते हैं ?

उ०—पदार्थों के विनाश के लिये इन्द्रियों और मन सम्बन्धी प्रतिज्ञान के पहुँचने जो सामान्य ग्रहण होता है उसे अक्षयशरीर कहते हैं।

२४३. प्र० - अरविपिदातेन विसृज्यते कः कः ?

उ०—अवधिज्ञानमे पहले होनेवाले मानान्य प्रहणको अवधिनिर्णय कहते हैं।

३४४. प्र०—वेपलहमंन गित्तरो वहुते हे ?

उ०—बैद्यशास्त्रों के गाय होने वाले मानास्य ऋषियों के दल दर्शन कहते हैं ।

१४५. ५० - बौन सा हस्तन दिन कुयस्थानोमि होता ?

उ०—वस्तुदर्शन और अक्षयभुज्जन क्षारहृत् गुणस्थान तत्र होतु है । अक्षि-
दर्शन क्षीपेत् क्षारहृत् गुणस्थान तत्र होतु है । और ब्रह्म दर्शन तैश्च त्रया
क्षीपेत् गुणस्थानमे क्षीर निक्षीपेत् होतु है ।

३४६. प्र०—संख्या किससे बढ़ने लगे ?

उ०—इदानीं अनुसूचित जातिभोग, बचनभोग और मनोभोगही प्रदर्शित हो
रहे हैं ।

१४७ प्र०—लेख्यको जितने भेद है ?

[illegible]

२४८ प्र०—कौन संख्या किन गुणायासोवे होयी ? २

[illegible]

१४९. प्र० अथवा मार्गदर्शक विषयों में हैं ।

२०-२१ ई - मरु और अमरु ।

११०. ५०—अथ काव्य विमर्शो नाम १०

[illegible]

उ०—जो जीव आगे मुक्ति प्राप्त करने के भय महने हैं। और मुक्ति समनवी योगफल न मिलनेसे जीवोंकी परमात्मा होती है।

३५१. प्र०—भय-अभयके कितने गुणस्थान होते हैं ?

उ०—भय जीवोंके दोस्त, गुणस्थान होने हैं और अभयोंके केवल एक पहला गुणस्थान ही होता है।

३५२. प्र०—सम्यक्त्व किसको कहते हैं ?

उ०—जिनेन्द्र भगवान्के द्वारा कहे गये छे द्रव्य, तीन अविनाश और नौ पदार्थोंका श्रद्धान करनेको सम्यक्त्व कहते हैं।

३५३. प्र०—सम्यक्त्व मार्गोंके कितने भेद हैं ?

उ०—छे भेद हैं—उपशम सम्यक्त्व, वेदना या क्षयोपशमित सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व, सम्यक् मिथ्यात्व, साक्षादन सम्यक्त्व और मिथ्यात्व।

३५४. प्र०—उपशम सम्यक्त्व किसको कहते हैं ?

उ०—अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ और मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्व तथा सम्यक्त्व मोहनीय, इन सात कर्मप्रकृतियोंके उपशमसे, कीचटके नीचे बैठ जानेसे निर्मल हुए जलके समान जो पदार्थोंका निर्मल श्रद्धान होता है उसे उपशम सम्यक्दर्शन कहते हैं। उसके दो भेद है—प्रथमोपशम सम्यक्त्व और द्वितीयोपशम सम्यक्त्व।

३५५. प्र०—प्रथमोपशम सम्यक्त्व किसको होता है ?

उ०—चारों गतियोंमेंसे किसी भी गतिमें वर्तमान भव्य, सेनी पक्षेन्द्रिय, पर्याप्तक, विशुद्ध परिणामी साकार उपयोगी, शुभलेख्या वाले और करणलब्धिसे सहित अनादि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि जीवको ही प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्ति होती है।

३५६. प्र०—लब्धियाँ कितनी हैं ?

उ०—पांच हैं—क्षयोपशम लब्धि, विशुद्धि लब्धि, देशना लब्धि, प्रायोग्य लब्धि और करण लब्धि। इनमेंसे चार लब्धियाँ तो भव्य अभव्य सभीके होती हैं, किन्तु करण लब्धि भव्यके ही होती है और उसके होने पर सम्यक्त्व अवश्य होता है।

३५७. प्र०—क्षयोपशम लब्धि किसको कहते हैं ?

उ०—इति समस्त बर्माका अनुभाग प्रतिनमय धनस्तुति पठता हुआ उद्यमे आता है तब क्षयोरसम सन्धि होती है। क्योंकि उत्पृष्ट अनुभागके अनन्तरवै भाग मात्र देनापानी स्वर्जनीका उद्यमानाव रूप क्षय और उद्यमरी न प्राप्त सर्वपाती स्वर्जक का सदवस्था रूप उद्यमनरी प्राप्तिना नाम क्षयोरसम सन्धि है।

३५८ प्र०—विपुष्टि सन्धि किसको कहते हैं ?

उ०—क्षयोरसम सन्धिके होने से शाखा वेदनीय आदि प्रसंग प्रवृत्तिदीके यन्त्रमें बारण जो धर्मानुसंगस्व मुक्त परिणाम होता है उसकी प्रवृत्ति विपुष्टि सन्धि कहते हैं।

३५९ प्र०—देहना सन्धि किसको कहते हैं ?

उ०—छे द्वय और नौ पदार्थोंका उद्देग कानेदान भाषाओं बर्णनके लक्ष-
को जयका उद्देगित पदार्थोंका धारणासे लक्षको देहनासन्धि का-१ है ?

३६० प्र० प्रयोग सन्धि किसको कहते हैं ?

उ०—उत्तर वही सन्धि गीत सन्धिसंगे दृग लोच द्वीत लक्ष विपुष्ट होता हुआ, आयुके बिना दीप लक्ष बर्माका स्थिति ज्ञान बोधाबोधी लक्ष प्रमाण लक्ष लक्ष है। लक्ष पक्ष जो धर्मानुसंग का उद्यमे ज्ञानका धर्म देने पर बहुभाग प्रमाण अनुभागका देहका रूप एक भाग प्रमाण अनुभागकी लक्ष है। दृग बर्माकी बर्माकी धारणाके लक्षका प्रमाण सन्धि कहते हैं।

३६१ प्र०—वर्ण सन्धि किसको कहते हैं ?

उ०—अध्वरग, कर्तृवर्णन की अतिवर्णनका रूप धर्मानुसंगे लक्षकी वर्ण सन्धि कहते हैं। दृगका वर्णन पठते वही जो वर्ण है।

३६२ प्र०—प्रयोगोपसम सन्धिकेवही प्र० प्र विना प्रकाश होती है

तो मिथ्यात्वका उदय होता है और यदि मिथ्यात्वका जो मिथ्यात्व हीकर
वेदक अथवा उपशम सम्पत्ति प्राप्त करता है या सम्पत्तिमयता हीकर
वेदक सम्पत्ति को प्राप्त करता है।

३६४. प्र०—अन्तरकरण किसको कहते हैं ?

उ०—प्रथम कर्मका अन्तरकरण करता है उसकी प्रथम स्थिति और
द्वितीय स्थितिको छोड़कर मध्यवर्ती अन्तर्मुहूर्त मान स्थिति निर्दिष्टता अर्थात्
करनेको अन्तरकरण कहते हैं। जैसे, मिथ्यात्व हीकर मिथ्यात्वसम्पत्ति अन्तरकरण
करता है। इसमें अन्तर्मुहूर्त का उदय होता है। जो वह अन्तर्निष्ठावस्था उत्पन्न होने
वाले मिथ्यात्वकर्मकी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति सम्पत्ति निर्दिष्टता छोड़कर
उससे उपरके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थितिके निर्दिष्टता अपने स्थानमें उठा-उठाकर
कुछको प्रथम स्थिति (नीचेकी स्थिति) सम्पत्ति निर्दिष्टता में मिला देता है और
कुछको द्वितीय स्थिति (उपरकी स्थिति) सम्पत्ति निर्दिष्टता में मिला देता है।
इस तरह वह तब तक करता रहता है जबतक अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थितिके पूरे
निपेक समाप्त न हो जायें। जब मध्यवर्ती सम्पत्ति निर्दिष्टता उपरकी अथवा नीचेकी
स्थितिके निपेकोंमें दे दिये जाते हैं और प्रथम स्थिति तथा द्वितीय स्थितिके
बीचका अन्तरायाम मिथ्यात्व कर्मके निपेकोंसे सर्वथा शून्य हो जाता है तब
अन्तरकरण पूर्ण हो जाता है।

३६५. प्र०—वेदक अथवा क्षायोपशमिक सम्पत्ति किसको कहते हैं ?

उ०—अनन्तानुबन्धी कपायका अप्रशस्त उपशम अथवा विसंयोजन होनेपर
और मिथ्यात्व तथा सम्पत्ति मिथ्यात्व प्रकृतिका प्रशस्त उपशम अथवा अप्रशस्त
उपशम अथवा क्षयोन्मुख होने पर, तथा देशघाती सम्पत्ति प्रकृतिका उदय होने
पर जो तत्त्वार्थश्रद्धान होता है उसे वेदकसम्पत्ति कहते हैं। इसीको क्षायोप-
शमिक सम्पत्ति भी कहते हैं। क्योंकि सर्वघाती अनन्तानुबन्धी कपाय, मिथ्यात्व
और सम्पत्ति मिथ्यात्वका उदयाभाव रूप क्षय तथा सदवस्थारूप उपशम होनेपर
और देशघाती सम्पत्ति प्रकृतिका उदय होनेपर वेदक सम्पत्ति होता है।
इससे इसीका दूसरा नाम क्षायोपशमिक सम्पत्ति है।

३६६. प्र०—अप्रशस्त उपशम या देशोपशम किसे कहते हैं ?

उ०—जिसमें विवक्षित प्रकृति उदय आने योग्य तो न हो किन्तु उसका
स्थिति अनुभाग घटाया बढ़ाया जा सके अथवा संक्रमण वगैरह किये जा सकें,
उसे अप्रशस्त उपशम या देशोपशम कहते हैं।

३६७. प्र०—प्रशस्त उपशम या सर्वोपशम किसको कहते हैं ?

उ०—जिसमें विवक्षित प्रकृति न तो उदय जाने योग्य हो हां और न उगना स्थिति अनुमाग घटाया जा सके तथा न संक्रमण धीरे ही किया जा सके उसे प्रसस्त जलसम या सर्वोपयुक्त कहते हैं ?

स०—वेदक सम्पन्नता की स्थिति कितनी है ?

४६९ प्र० - शायिक सम्प्रदाय की स्थिति कितनी है ?
 टिप्पण: सागर प्रमाण है।
 ४६९ प्र० - शायिक सम्प्रदाय की स्थिति कितनी है ?

६६१ प्र० - शायिक सम्पत्तयः शिगको कर्तव्ये ह ?

२७०. प्र०—शासिक सम्पत्ति की...

१७०. प्र०—शासिक सम्बन्ध की उत्पत्ति का क्या अर्थ है ?
 १८०—असमर्थ, देश भय, प्रमत्त भय, ...
 देशक सम्बन्ध...

२०—असंयत, देव मया, प्रमत्त मया अथवा अन्यथा अथवा सुदृष्टान्त-
वर्ती देवः सत्यमूर्ति मनुज्य एतत् तौ अथ वर्यन् मनुज्यस्य अंतर्जन्य-
वर्यन्ते अन्तर्मे अन्तर्जन्यवर्धी काय मान एतत् तौ अथ वर्यन् अंतर्जन्य-
अर्थात् उक्तं दारुत वर्यन् अथ नद गोवर्धन एतत् वर्यन् है। एतत् वर्यन्
दार्जुन मोहनीय वी दारुता वा अन्तर्मे वर्यन् है। एतत् वर्यन्
१७१. २०—दार्जुन मोहनीय दारुता वा अन्तर्मे वर्यन् है। एतत् वर्यन्

१७१. ५०-दरम माहकी दानवावा कायम बारी बरला ?

३७१. क्षाधिक सत्त्वस्य कितने गुणस्थानों में रहता है ?

उ०—तीसरे सातवें गुणस्थान तक ।

३८०. प्र०—कितने पक्षों में कितने सम्पत्त होते हैं ?

उ०—प्रथम नरक में तीनों सम्पत्त पाये जाते हैं, किन्तु दोन-ए नरक में क्षाधिक सम्पत्त नहीं पाया जाता । निम्नो, मनुष्यों और देवों में तीनों सम्पत्त पाये जाते हैं । केवल इतनी विशेषता है कि मनुष्यामी, दान्तर और गोतिष्ठ देवों में तथा देवियों में क्षाधिक सम्पत्त नहीं पाया जाता ।

३८१. प्र०—संज्ञा कितनी कहते हैं ?

उ०—ती जीव मनकी सहायतासे ज्ञाना चरित्को प्राप्त कर सक्ता है उसे संज्ञा कहते हैं और जो ऐसा नहीं कर सक्ता उसे असंज्ञा कहते हैं ?

३८२. प्र०—संज्ञा के कितने गुणस्थान होते हैं ?

उ०—संज्ञा के प्रथमसे लेकर बारह गुणस्थान होते हैं और असंज्ञा के केवल एक पक्ष गुणस्थान ही होता है ।

३८३. प्र०—आहारक किन्नी कहते हैं ?

उ०—भौतिक, ऐकिक और अनाहारक इन तीन वर्गों में वर्गीकृत किया एक भौतिक, भोजन तथा उसके योग्य पदार्थ वर्गीकृत होते हैं । अनाहारक वे होते हैं जो अनाहारक कहते हैं । और ऐकिक वे होते हैं जो एक ही पदार्थ से वर्गीकृत होते हैं ।

३८४. प्र०—अनाहारक जीव कौन हैं ?

उ०—विष्णु जी में विष्णु जीव, प्रवर और मनुष्य वर्गीकृत होते हैं । मनुष्य वर्गीकृत तथा अधोद्वितीय और विष्णु जीव विष्णु वर्गीकृत होते हैं ।

३८५. प्र०—आहारक के कितने गुणस्थान होते हैं ?

उ०—आहारक के पक्ष में लेकर लेकर गुणस्थान तक होते हैं ।

३८६. प्र०—अनाहारक के कितने गुणस्थान होते हैं ?

उ०—अनाहारक के पक्ष में लेकर लेकर गुणस्थान तक होते हैं ।

३८७. प्र०—अनुयोगद्वार किसे हैं ?

उ०—सत्, संख्या, घेव, संपर्क, काल, अन्तः, भाव और अत्यन्त वृत्ति के आठ अनुयोगद्वार हैं ।

३८८. प्र०—अनुयोगद्वारोंका क्या प्रयोजन है ?

उ०—ये आठ अनुयोगद्वार अर्थात् अभिन्न अन्तः ही जानने के कारण हैं क्योंकि इनकी जानकारी के बिना गुणस्थान और सामान्यतत्त्वोंका ठीक-ठीक ज्ञान नहीं हो सकता ।

३८९. प्र०—सत्प्ररूपणा किसका कथन करती है ?

उ०—सत्प्ररूपणा पदार्थोंके अस्तित्वका कथन करती है । उस कथन के दो प्रकार हैं—एक ओघ कथन और एक आदेश कथन । सामान्य कथनों ओघ कहते हैं । जैसे मिथ्यादृष्टि गुणस्थान है, सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थान है, आदि । और विशेष रूपसे कथन करनेको आदेश कहते हैं । जैसे, नारसी जीवोंके चार गुणस्थान होते हैं, तिर्यक्षोंके पाँच गुणस्थान होते हैं आदि ।

३९०. प्र०—संख्या अनुयोग किसका कथन करता है ?

उ०—सत्प्ररूपणामें जिन पदार्थोंका अस्तित्व कहा गया है उनकी संख्याका कथन संख्या अनुयोगमें होता है । जैसे, मिथ्यादृष्टि अनन्त हैं, सासादन सम्यग्दृष्टि पत्यके असंख्यातवें भाग है । इस कथनके भी दो प्रकार हैं—ओघ और आदेश ।

३९१. प्र०—क्षेत्र अनुयोग किसका कथन करता है ?

उ०—उक्त दोनों अनुयोगोंके द्वारा जाने हुए द्रव्योंकी वर्तमान अवगाहनाका कथन क्षेत्रानुयोग करता है । जैसे मिथ्यादृष्टि जीव सर्वलोकमें रहते हैं, इसके भी पूर्ववत् दो भेद हैं ।

३९२. प्र०—स्पर्शनानुयोग किसका कथन करता है ?

उ०—उक्त तीन अनुयोगोंके द्वारा जाने हुए द्रव्योंके अतीतकाल विशिष्ट क्षेत्रका कथन अर्थात् भूतकालमें जितने क्षेत्रको स्पर्श किया है और वर्तमानमें जितने क्षेत्रको स्पर्श किया जा रहा है, उसका कथन स्पर्शनानुयोग करता है । इस कथनके भी पूर्ववत् दो प्रकार हैं ।

३९३. प्र०—कालानुयोग किसका कथन करता है ?

उ०—पूर्वोक्त चार अनुयोगोंके द्वारा जाने गये द्रव्योंके कालका कथन कालानुयोग

है। विशेषतः अधिकांश निरुत्तर आर्य समाज, सर्वत्र सामान्य शैलीपर चढ़ते जाते जीवोंमें अधिकांश अधिकांश प्रथम समाजमें आर्य, दूसरे समाजमें शैलीपर, तीसरे समाजमें तीसरे, चौथे समाजमें शैलीपर, पाँचवें समाजमें शैलीपर, छठे समाजमें शैलीपर, सातवें समाजमें शैलीपर आदि आर्य समाजमें भी शैलीपर शैलीपर समाजमें शैलीपर पर चढ़ते हैं। इस प्रकार समाजों में शैलीपर होता है।

४०२. प्र०—क्षपक श्रेणीके चार गुणधर्मोंमें जीवोंका प्रमाण मिलता है ?

उ०--छे महीना आठ समयमें धाक श्रेणीसे योग्य आठ समय होते हैं। उनमें जघन्यसे एक जीव एक समयमें और उत्कृष्टमें एक गो आठ जीव धाक गुहस्थानमें प्रवेश करते हैं। यह सामान्य कथन है। विशेषसे धाक श्रेणीवालोंका प्रमाण उपशम श्रेणीवालोंसे दुगुना है।

४०३. प्र०—सयोगकेवल जीव कितने हैं ?

उ०—सयोगकेवली जीशंकी संख्या आठ लाख अठ्ठानवे हजार पांच सौ दो है।

४०४. प्र०—अधोगेवली जीव कितने हैं ?

उ०—अयोगकेवली जीवोंका प्रमाण क्षपक श्रेणीवाले जीवोंके बराबर ही होता है ।

४०५. प्र०—मिथ्यादृष्टि जीव कितने क्षेत्रमें रहते हैं ?

उ०-—सर्वलोकमें रहते हैं ।

४०६ प्र०—सासादन सम्पद्दृष्टिसे लेकर अयोगकेवली गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थानवाले जीव कितने क्षेत्रमें रहते हैं ?

७०--लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रमें रहते हैं। किन्तु इतना विशेष है कि प्रतर समुद्धात करनेवाले सयोगकेवली लोकके असंख्यात बहुभाग प्रमाण क्षेत्रमें और लोकपूरण समुद्धात करनेवाले सयोगकेवली सर्वलोकमें रहते हैं।

४०७. प्र०—मिथ्यादृष्टि जीवोंने कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

उ०—सर्वलोक स्पर्श किया है ।

४०८. प्र०—सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंने कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

उ०—लोकका असंख्यातवां भाग स्पर्श किया है। और विहारवत्स्वस्थान, वेदना समुद्घात, कषाय समुद्घात तथा वैक्रियिक समुद्घातगत सासादन सम्यग्दृष्टि

उ०—नाना जीवों की अपेक्षा मिथ्यादृष्टी मात्र होती है। एक जीवों की अपेक्षा तीन प्रकार है—अनादि अमन्य, अनादि मान्य और सादि मान्य। अमन्य मिथ्यादृष्टीका काल अनादि अमन्य है क्योंकि अमन्य मिथ्यात्वका अन्तिम और अन्त नहीं होता। भव्य जीवों मिथ्यात्वका काल अनादि मान्य भी होता है और सादि सान्त भी होता है। सादि मान्य मिथ्यात्वका काल जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त है क्योंकि कोई सम्यग्मिथ्यादृष्टी, अमन्य अमन्य सम्यग्दृष्टी, अमन्य संयमासंयत अथवा प्रसन्नसंयत और मिथ्यात्वसे प्राप्त होकर और अन्तर्मुहूर्त काल तक मिथ्यात्वमें रहकर पुनः सम्यग्मिथ्यात्वसे या अमन्य सम्यग्दृष्टी या संयमासंयमको अथवा अग्रस्त संयमकी प्राप्त कर सकता है। तथा एक जीवकी अपेक्षा सादि सान्त मिथ्यात्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम और पुद्गल परावर्तन है। क्योंकि एक बार सम्यक्त्व होने छूट जाने पर भी जीव अधिक अधिक कुछ कम अर्ध पुद्गल परावर्तन कालतक ही संसारमें रहता है।

४१४. प्र०—सासादन सम्यग्दृष्टी जीव कितने काल तक होते हैं ?

उ०—नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय तक होते हैं। और उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग कालतक होते हैं। गुलासा इस प्रकार है—पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र उपशम सम्यग्दृष्टी जीव उपशम सम्यक्त्वके कालमें एक समय मात्र शेष रहने पर एक साथ सासादन गुणस्थानकी प्राप्त हुए और एक समय तक सासादन सम्यग्दृष्टी रहकर दूसरे समयमें सबके सब मिथ्यात्वमें चले गये। उस समय तीनों लोकोंमें कोई भी सासादन सम्यग्दृष्टी नहीं रहा। इस तरह नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यकाल एक समय प्राप्त हुआ। पल्योपमके असंख्यातवें भाग उपशम सम्यग्दृष्टी जीव उपशम सम्यक्त्वके कालमें एक समयसे लेकर छै आवली अवशिष्ट रहने पर सासादन गुणस्थानकी प्राप्त हुए। वे जब तक मिथ्यात्वकी प्राप्त नहीं होते तब तक अन्य भी उपशम सम्यग्दृष्टी सासादन गुणस्थानकी प्राप्त होते रहते हैं। इस तरह उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग काल तक सासादन गुणस्थान पाया जाता है। और एक जीवकी अपेक्षा सासादन गुणस्थानका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल छै आवली है; क्योंकि उपशम सम्यक्त्वके कालमें कमसे कम एक समय और अधिकसे अधिक छै आवली काल शेष रहने पर उपशम सम्यग्दृष्टी जीव सासादन गुणस्थानकी प्राप्त होता है। और जितना उपशम सम्यक्त्वका काल शेष रहता है उतना ही सासादन गुणस्थानका काल होता है।

४१५. प्र०—सम्यग्मिथ्यादृष्टी जीव कितने काल तक होते हैं ?

उ०—नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त तक और उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग काल तक होते हैं। गुलासा इस प्रकार है—

४२४. प्र०—साधारण सम्म्यग्दृष्टि गुणस्थानता का परमाणु कितना है ?

उ०—नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यका असंख्यातवां भाग है। क्योंकि हमारे हम एक समय और अधिकसे अधिक पल्यका असंख्यातवां भाग साधारण साधारण सम्म्यग्दृष्टि की ओर जीव नहीं पाया जाता। एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल पल्यका असंख्यातवां भाग है; क्योंकि जघन्य सम्म्यग्दृष्टि मिलने पर ही साधारण सम्म्यग्दृष्टि होता है और एक बार जघन्य सम्म्यग्दृष्टि मिलने पर पुनः पल्यका के असंख्यातवां भाग पल्यका बीनने पर ही जघन्य सम्म्यग्दृष्टि मिलने लगी है। एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्ध पुद्गल परावर्तन है। क्योंकि एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने उपशम सम्म्यग्दृष्टि प्राप्त करके अनन्त संगमरसे अर्ध पुद्गल परावर्तनमात्र बिना पुनः अन्तर्मुहूर्तक सम्म्यग्दृष्टि स्वरूप वह सासादनसम्पत्की हो गया। वहीसे मिथ्यात्वमें गया गया और अर्धपुद्गल परावर्तन कालतक मिथ्यात्वमें रहकर जघन्य सम्म्यग्दृष्टि प्राप्त करके पुनः सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ। इस तरह उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना।

४२५. प्र०—सम्म्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानता अन्तरकाल कितना है ?

उ०—नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यका असंख्यातवां भाग है। एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्ध पुद्गल परावर्तन है। इसका उपपादन सासादन सम्म्यग्दृष्टिके अन्तरकालको दृष्टिमें रखकर कर लेना चाहिए।

४२६. प्र०—असंयत सम्म्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थानका अन्तरकाल कितना है ?

उ०—नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरकाल नहीं है; क्योंकि उक्त गुणस्थानोंमें सदा ही जीव पाये जाते हैं। एक जीवकी अपेक्षा उक्त गुणस्थानोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। वह इस प्रकार है एक असंयत सम्म्यग्दृष्टि संयमासंयमको प्राप्त हुआ और एक अन्तर्मुहूर्त तक संयमासंयमी रहकर पुनः असंयत सम्म्यग्दृष्टि हो गया। एक संयतासंयत मिथ्यादृष्टि हो गया या असंयत सम्म्यग्दृष्टि अथवा संयमी हो गया और एक अन्तर्मुहूर्त तक वहाँ रहकर पुनः संयतासंयत हो गया। इसी तरह एक प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत होकर पुनः प्रमत्तसंयत हो गया। और एक अप्रमत्तसंयत उपशम श्रेणीपर चढ़कर पुनः लीटा और अप्रमत्त संयत हो गया। इसी तरह प्रत्येक उक्त गुणस्थानका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त

होना है। तथा उत्पन्न अन्तरकाट कुछ कम अर्धं पुरुष परावर्तन है। गो अनादि
मिथ्यादृष्टि जीवको सम्पन्न उत्तम कराकर उम गुणस्थानमें भेदना चाहिये और
बहुतेरे पुन कराकर पुनः मिथ्यात्वमें लाकर कुछ कम अर्धं पुरुष परावर्तन बाध
तक धन्य कराकर, पुनः सम्पन्न उत्तम कराकर उम गुणस्थानमें ले जाना
चाहिये। इस तरह करनेसे उत्पन्न अन्तरकाट निश्चय है।

४२७ प्र०—उपमान अर्थात् धारों गुणस्थानोका अन्तरकाट विना है ?

उ०—नामा जीवोको अर्थात् जपन्य अन्तर एक सम्य है। जो इस प्रकार
है—मनुष्य जीव अनुवर्तन गुणस्थानमें गये और उमका बाध समान होनेपर
कुछ ऊपर बढ़ गये, कुछ नीचे गिरे गये और एक सम्य तक अनुवर्तनमें कोई भी
गहो रहा। उनके बाद दूसरे सम्यमें गाहने बहुर और नीचे गिरे बनेक
गैर अनुवर्तन गुणस्थानमें ही गये। इस प्रकार एक सम्य उपम्य अन्तर
होना इसी तरह और तीन गुणस्थानोंका भी अन्तर जाना चाहिये। उमान
अर्थात् धारों गुणस्थानोका उत्पन्न अन्तरकाट ही लपका है। बसो'क अर्थमें
अधिक अर्धं पुनक तक कोई भी उमान अर्थात् गुणस्थानोमें किसी गुण
स्थानमें नहीं हो सकता। बाधों उमानका एक ही रंगी अन्तर अन्तर अन्तर
अनुवर्तन है। बसो'क एक अनुवर्तन उमानक गैर उमके लपका अन्तर
बहुर और बाधों गिरेक गुण अनुवर्तन अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
अनुवर्तनका उपम्य अन्तर हुआ बसो'क अर्थात् अनुवर्तन अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
अन्तर उमानक होनेसे पुन उम नीचे उम अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
और नीचे गुणस्थानमें आता हुआ है। इस बाधों अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
बहुर भी अनुवर्तन ही होता है। इसी प्रकार एक ही उम। इस प्रकार
एक जीवको अर्थात् उपम्य अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
एक जीवको अर्थात् उपम्य अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
अनादि मिथ्यादृष्टि जीवको सम्यक उपम्य अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
उपमान अर्थात् धारों अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
गिरेक मिथ्यात्तम अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
बहुर पुन अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
बहुरो उत्पन्न अन्तरकाट कुछ कम अर्धं पुरुष परावर्तन है।

४२८ प्र०—धारों अर्थक और अर्थकका गुणस्थानका अन्तरकाट
विना है ?

उ०—नामा जीवोको अर्थात् जपन्य अन्तर एक सम्य है। जो इस प्रकार
है—मनुष्य जीव अनुवर्तन गुणस्थानमें गये और उमका बाध समान होनेपर
कुछ ऊपर बढ़ गये, कुछ नीचे गिरे गये और एक सम्य तक अनुवर्तनमें कोई भी
गहो रहा। उनके बाद दूसरे सम्यमें गाहने बहुर और नीचे गिरे बनेक
गैर अनुवर्तन गुणस्थानमें ही गये। इस प्रकार एक सम्य उपम्य अन्तर
होना इसी तरह और तीन गुणस्थानोंका भी अन्तर जाना चाहिये। उमान
अर्थात् धारों गुणस्थानोका उत्पन्न अन्तरकाट ही लपका है। बसो'क अर्थमें
अधिक अर्धं पुनक तक कोई भी उमान अर्थात् गुणस्थानोमें किसी गुण
स्थानमें नहीं हो सकता। बाधों उमानका एक ही रंगी अन्तर अन्तर अन्तर
अनुवर्तन है। बसो'क एक अनुवर्तन उमानक गैर उमके लपका अन्तर
बहुर और बाधों गिरेक गुण अनुवर्तन अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
अनुवर्तनका उपम्य अन्तर हुआ बसो'क अर्थात् अनुवर्तन अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
अन्तर उमानक होनेसे पुन उम नीचे उम अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
और नीचे गुणस्थानमें आता हुआ है। इस बाधों अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
बहुर भी अनुवर्तन ही होता है। इसी प्रकार एक ही उम। इस प्रकार
एक जीवको अर्थात् उपम्य अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
एक जीवको अर्थात् उपम्य अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
अनादि मिथ्यादृष्टि जीवको सम्यक उपम्य अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
उपमान अर्थात् धारों अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
गिरेक मिथ्यात्तम अन्तरकाट ही उम। इस प्रकार
बहुर पुन अन्तरात्तम ही उम। इस प्रकार
बहुरो उत्पन्न अन्तरकाट कुछ कम अर्धं पुरुष परावर्तन है।

समयमें सबसे सब अग्निपुनिकरण क्षयक हो गये । और एक समय के लिए एक भी जीव अपूर्णकरण क्षयक नहीं रहा, दूसरे समयमें पुनः कालमें जीव अपूर्णकरण क्षयक हो गये । इस तरह जन्म-मरण एक समय होता है । इसी तरह एक ही आठ अपूर्णकरण क्षयकमेंसे सबके सब एक मात्र अग्निपुनिकरण क्षयक हो गये और छे मास तक कोई भी जीव क्षयक अपूर्णकरण नहीं हुआ । अतः उत्कृष्ट अन्तर छे मास होता है । इसी तरह घण्टा गुणस्थानोंका भी जन्म और उत्कृष्ट अन्तर जान लेना । एक जीवकी अपेक्षा एक चारों क्षयकता और अयोगक्षयकी गुणस्थानका अन्तर नहीं है क्योंकि क्षयक श्रेणीवाले जीवोंका पतन नहीं होता ।

४२९. प्र०—सयोगकेवली गुणस्थानका अन्तरकाल कितना है ?

उ०—नाता जीवों तथा एक जीवोंकी अपेक्षा भी सयोगकेवली गुणस्थानका अन्तर नहीं है; क्योंकि सयोग केवलियोंका कभी अभाव नहीं होता । तथा सयोग-केवलीसे अयोगकेवली हुए जीव पुनः सयोगकेवली नहीं होते ।

४३०. प्र०—मिथ्यादृष्टि गुणस्थान कौन-सा भाव है ?

उ०—मिथ्यात्व कर्मके उदयसे उत्पन्न होनेके कारण मिथ्यादृष्टि गुणस्थान औदयिक भाव है । क्योंकि जो उदयसे हो उसे औदयिक कहते हैं ।

४३१. प्र०—सासादन सम्यग्दृष्टि कौन-सा भाव है ?

उ०—आदिके चार गुणस्थानोंमें जो भाव बतलाये गये हैं वह दर्शन मोहनीय की अपेक्षासे बतलाये गये हैं । इसलिये दर्शन मोहनीय कर्मके उदय, उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशमसे न होनेके कारण सासादन सम्यक्त्व पारिणामिक भाव है । क्योंकि जो भाव किसी कर्मके उदय, उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशमसे नहीं होता उसे पारिणामिक कहते हैं ।

४३२. प्र०—सम्यग्मिथ्यादृष्टि कौन-सा भाव है ?

उ०—सम्यग्मिथ्यात्व कर्मका उदय होनेपर श्रद्धान-अश्रद्धान रूप जो मिला हुआ जीव भाव होता है उसमें जो श्रद्धानका अंश है वह सम्यक्त्वका हिस्सा है, उसे सम्यग्मिथ्यात्व कर्मका उदय नष्ट नहीं करता । इसलिये सम्यग्मिथ्यात्व भाव क्षायोपशमिक है ।

४३३. प्र०—असंयत सम्यग्दृष्टि कौन-सा भाव है ?

उ०—दर्शन मोहनीयकी उपशमसे उपशम सम्यक्त्व उत्पन्न होता है इसलिये असंयत सम्यग्दृष्टि औपशमिक भाव है । दर्शन मोहनीयके क्षयसे क्षायिक सम्यक्त्व होता है, इसलिये असंयत सम्यग्दृष्टि क्षायिक भाव है । सम्यक्त्व प्रकृतिके स्वाती स्पर्दकोंके उदयके साथ रहनेवाला सम्यक्त्व क्षायोपशमिक कहलाता

है। इसलिये अगम्यत सम्पन्नदृष्टी धारोपनात्मिक भाव है। इस तरह अगम्यत सम्पन्नदृष्टि गुणस्थानमें मौन भाव होते हैं।

४३४. प्र०—संपत्तासंगत, प्रमत्तसंगत और अप्रमत्तसंगत बीज-सा भाव है ?
उ०—चारित्र्य मोहनीय कर्मके उदयना धारोपना होनेपर गंधर्वागम्य, प्रमत्तसंगत और अप्रमत्तसंगत भाव उत्पन्न होते हैं इसलिये ये तीनों भाव धारोपनात्मिक हैं।

४३५. प्र०—अपूर्वस्वरूप आदि चारों उपनाम गुणस्थान बीज-सा भाव है ?
उ०—इनमें चारित्र्य मोहनीयद्वी इत्येक प्रवृत्तियोंका उत्पन्न होता है इसलिये चारों गुणस्थान औपनामिक भावमान हैं।

४३६. प्र०—चारों क्षयक, तत्त्वोपवेष्टा और अयोपवेष्टा बीज-सा भाव है ?
उ०—बर्माकी क्षय करनेके कारण और बर्माके क्षयसे उत्पन्न होनेके कारण तो क्षयक वर्गमें ही क्षयिक भावमान है।

४३७. प्र०—बर्मा किसको कहते हैं ?
उ०—जो पुरुषगुण स्वल्प जीवके साथ द्वय आदि दृष्टिमानोंके निर्दिष्टाने बर्मा होनेपरिणा होकर जीवके साथ संघर्षी प्राप्त होता है उसको बर्मा कहते हैं।

४३८. प्र०—बर्माके विनाश भेद है ?

उ०—आठ भेद हैं—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनाय, आतु, ज्ञान, दोष और अज्ञानराय।

४३९. प्र०—ज्ञानावरण बर्मा किसको कहते हैं ?

उ०—जो जीवके ज्ञान गुणको दृष्टिमान है उसका ज्ञानावरण बर्मा कहते हैं।

४४०. प्र०—दर्शनावरण बर्मा किसको कहते हैं ?

उ०—जो जीवके दर्शन गुणको दृष्टिमान है उसका दर्शनावरण बर्मा कहते हैं।

४४१. प्र०—वेदनाय बर्मा किसको कहते हैं ?

उ०—जो जीवके गुण और गुणव अनुभवना कारण है उसका वेदनाय बर्मा कहते हैं।

४४२. प्र०—आतु बर्मा किसको कहते हैं ?

उ०—जो जीवको मोहनीय कारण है वह आतु बर्मा कहते हैं।

४४३. प्र०—आतु बर्मा किसको कहते हैं ?

उ०—जिसके निमित्तमे जीव भासक आदि भवोंमें जाता है तथा उसमें अमृत समय तक मत्त रहता है वह मोघ कर्म है।

४४४. प्र०—नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जो शरीर आहार आदि नाना प्रकारको रखता करता है वह नाम कर्म है।

४४५. प्र०—गोत्र कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जीवको उच्च अथवा नीच कुलमें उत्पन्न करता है वह गोत्र कर्म कहा जाता है।

४४६. प्र०—अन्तराय कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जो दान, लाभ, भोग, उपभोग आदिमें विच्य करनेमें समर्थ है उसको अन्तराय कर्म कहते हैं।

४४७. प्र०—ज्ञानावरण कर्मके कितने भेद हैं ?

उ०—पाँच भेद हैं—मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण।

४४८. प्र०—दर्शनावरण कर्मके कितने भेद हैं ?

उ०—नी भेद हैं—निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा, प्रचला और चक्षुदर्शनावरण, अचक्षु दर्शनावरण, अवधि दर्शनावरण, केवल दर्शनावरण।

४४९. प्र०—निद्रानिद्रा किसको कहते हैं ?

उ०—जिसके तीव्र उदयसे जीव वृक्षकी चोटी पर भी गाढ़ निद्रामें सोता है उसे निद्रानिद्रा कहते हैं।

४५०. प्र०—प्रचलाप्रचला किसको कहते हैं ?

उ०—जिसके तीव्र उदयसे जीव बैठा या खड़ा-खड़ा सो जाता है, सोते हुए मुँहसे लार गिरती है, शरीर काँपता है उसे प्रचलाप्रचला कहते हैं।

४५१. प्र०—स्त्यानगृद्धि किसको कहते हैं ?

उ०—जिसके तीव्र उदयसे उठाये जाने पर भी प्राणी पुनः सो जाता है, सोते हुए भी कार्य कर डालता है, वड़बड़ाता है और दाँत किटकिटाता है उसे स्त्यानगृद्धि कहते हैं।

४५२. प्र०—निद्रा किसको कहते हैं ?

उ०—जिसके तीव्र उदयसे जीव थोड़ा सोता है, उठाये जाने पर जल्दी उठ

उ०—जिसके उदयमें एक मास देव कुटिब, आसन्नपुत्राश्च और पुत्रपुत्रद्वय भवता होती है यह सम्मत् किष्काव्य वर्षा है ।

४६१. प्र०—निष्पाद्यकर्म किसे कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयमें देव आसन्न पुत्रों भवता होती है यह निष्पाद्यकर्म है ।

४६२. प्र०—चारित्र मोहनीय कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—पापके कार्योंका त्यागकर ऐसे ही चारित्र कहते हैं । उस चारित्रको जो मोहित करता है अर्थात् धाँपता है, उसे चारित्र मोहनीय कर्म कहते हैं ।

४६३. प्र०—चारित्र मोहनीयके कितने भेद हैं ?

उ०—दो भेद हैं—कषाय वेदनीय और नोकषाय वेदनीय । कषाय वेदनीयके सोलह भेद हैं—अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ । तथा नोकषाय वेदनीयके नौ भेद हैं—स्त्रीवेद, पुत्रवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा ।

४६४. प्र०—अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ किसको कहते हैं ?

उ०—अनन्त भवोंको बाँधना ही जिसका स्वभाव है ऐसे क्रोध मान माया लोभको अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ कहते हैं । सारांश यह है कि इन कषायोंका संस्कार अनन्त भवों तक माना गया है । ये चारों ही कषाय सम्मत्त्व और चारित्र दोनोंको घातती हैं ।

४६५. प्र०—अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ किसको कहते हैं ?

उ०—अप्रत्याख्यान संयमासंयम या देश चारित्रको कहते हैं । उसको जो आवरण करता है उसे अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ कहते हैं ?

४६६. प्र०—प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ किसको कहते हैं ?

उ०—प्रत्याख्यान कहते हैं संयम अथवा महाव्रतको । उसको जो आवरण करते हैं वे प्रत्याख्यानावरणीय क्रोध मान माया लोभ कहलाते हैं ।

४६७. प्र०—संज्वलन क्रोध मान माया लोभ किसको कहते हैं ?

उ०—जो कषाय चारित्रका घात तो नहीं करती किन्तु यथाख्यात चारित्रको उत्पन्न नहीं होने देती उसको संज्वलन क्रोध मान माया लोभ कहते हैं ।

४६८. प्र०—नोकषाय किसको कहते हैं ?

उ०—ईषत् कषायको नोकषाय कहते हैं ।

४८५. प्र०—शरीरमें अंग उपोप कौनसे हैं ?

उ०—शरीरमें दो भेद, बाह्य, एक भिन्न, मीन, हृदय और मस्तिष्क ये आठ अंग होते हैं। इनके भिन्न अंग उपोप होते हैं—जैसे हृदय, भ्रू, कान, नास, आंख, तालु, जीभ वगैरह।

४८६. प्र०—संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे शरीरमें हड्डि और उसकी सन्धिषोंकी रचना हो ?

४८७. प्र०—वज्रमय नाराच शरीर संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—हड्डियोंके संघर्षको संहनन और घेष्टनको वज्रमय कहते हैं। जिस कर्मके उदयसे वज्रमय हड्डियां वज्रमय घेष्टनके वंशित और वज्रमय नाराचसे कौलित होती हैं।

४८८. प्र०—वज्रनाराच संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे पूर्वोक्त अस्थिवन्धन ही वज्रमय वंशितसे रहित हो।

४८९. प्र०—नाराच संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे नाराच अर्थात् कौलित सहित हाड़ हों किन्तु वज्रमय न हों।

४९०. प्र०—अर्धनाराच संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे हाड़ोंकी सन्धियां नाराचसे आधी विधी हुई हों।

४९१. प्र०—कौलक संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे हड्डियां परस्परमें कौलित हों वह कौलक संहनन नामकर्म है।

४९२. प्र०—अर्धप्राप्ताष्टपाटिका संहनन नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जुदे-जुदे हाड़ शिराओंसे बँधे हुए हों।

४९३. प्र०—वर्ण नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीवके शरीरमें अपनी जातिके अनुसार नियत काले-पीले आदि वर्णकी उत्पत्ति हो।

४९४. प्र०—गन्ध नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीवके शरीरमें अपनी जातिके अनुसार नियत गन्ध उत्पन्न होती है।

४९५. प्र०—रस नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीवके शरीरमें अपनी जातिके अनुसार नियत निष्ठ आदि रस उत्पन्न हो।

४९६. प्र०—स्पर्श नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीवके शरीरमें अपनी जातिके अनुसार नियत रस उत्पन्न होता है।

४९७. प्र०—आनुपूर्व नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जन्ममें पहले जोर मरणके पीछे जीवने एक दो और तीन समयमें अर्थात् विषह गतिमें वर्तमान जीवके प्रदेशोंका आकार मरणमें पूर्वके शरीरके आकार होता है।

४९८. प्र०—तात्पान नामकर्म और आनुपूर्व नामकर्ममें क्या अन्तर है ?

उ०—गन्धान नामकर्मका उदय शरीर छत्राके प्रथम समयमें होता है और आनुपूर्वका उदय विषह गतिमें होता है। आनुपूर्वके उदयमें ही जीव इच्छित गतिमें जाना है। विषह गतिमें आकार विधाय बनाये गगना और इच्छित गतिमें न कराना ये दोनों ही आनुपूर्वके कार्य हैं।

४९९. प्र०—अगुरु लघु नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयमें जीवका शरीर न तो छोटेके मानक समान भारी हो न आकृति दर्दकी तरह हुआ हो।

५००. प्र०—अपमान नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयमें जीवकी पीडा देनेवाले अवनत हो उसे बाग्-सीमेंके सीग।

५०१. प्र०—परघात नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयमें जीवका धान करनेवाले अवनत हो। अ० अ० अ० दाढ़ में विष, दिवले के डंक, गिरने मग लग आदि।

५०२. प्र०—उत्प्राप्त नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयमें जीव उत्प्राप्त और निरन्तर अवनत होता है।

५०३. प्र०—आताप नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयमें जीवके शरीरके अन्तर्गत अवनत हो। अ० अ० अ० आताप जीवोंके शरीर के अन्तर्गत अवनत हो। अ० अ० अ० आताप जीवोंके शरीर के अन्तर्गत अवनत हो।

४९८—वर्तमानक, ५०० ९, ५० ११-१२।

५०४. प्र०—उद्योत नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव के अन्तरमें उद्योत उत्पन्न होता है। जैसे मन्त्र, साद्योत नगोरुद्धे चरीरमें उद्योत पाया जाता है।

५०५. प्र०—विहायोगति नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—विहायम् नाम प्राप्त करता है। जिस कर्मके उदयसे जीव उस आत्मामें गमन हो उसको विहायोगति नामकर्म कहते हैं।

५०६. प्र०—तिव्यंश और ननुर्वोता भूमिपर गमन किस कर्मके उदयसे होता है ?

उ०—विहायोगति नामकर्मके उदय से।

५०७. प्र०—व्रत नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे दोऽन्द्रिय आदि पर्याप्त हो।

५०८. प्र०—स्वावर नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव स्वावर पर्याप्तको प्राप्त हो।

५०९. प्र०—वादर नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव वादरकाय वालोंमें उत्पन्न हो।

५१०. प्र०—सूक्ष्म नाककर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव सूक्ष्मताको प्राप्त हो।

५११. प्र०—पर्याप्त नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव पर्याप्त होता है।

५१२. प्र०—अपर्याप्त नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव पर्याप्तियोंको समाप्त करनेमें समर्थ नहीं होता।

५१३. प्र०—प्रत्येक शरीर नामकर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव प्रत्येक शरीर होता है, अर्थात् एक शरीरमें एक ही जीव पाया जाता है।

५१४. प्र०—साधारण शरीर नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे जीव साधारण शरीर वाला होता है।

५१५. प्र०—स्थिर नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे रस, रुधिर, आदि धातुएँ स्थिर हों, उनका वनाश न हो।

५१६. प्र०—अग्निहर नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे रस रघिर आदि धातुएँ अग्निहर हो ।

५१७. प्र०—द्युम नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे धन और उपाय सम्पन्न होने हैं ।

५१८. प्र०—अयुध नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिस कर्मके उदयसे धन और उपाय सुन्दर न हो ।

५१९. प्र०—सुभग नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—सौभाग्यको उत्पन्न करनेवाले कर्मको सुभग कहते हैं ।

५२०. प्र०—सुभग नाम कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—सुभाग्य को उत्पन्न करनेवाले कर्मको सुभग कहते हैं ।

वर्ष है। दूसरे आदि निषेधोंकी स्थिति कमसे एक-एक समय कहीं-कहीं अन्तिम निषेधकी स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर होती है।

५५१. प्र०—आवाधाकाल कितने कहते हैं ?

उ०—कर्मका बन्ध होनेके पश्चात् जयन्त वह कर्म उदय अथवा उद्वेगना अवस्थाको प्राप्त नहीं होता, उतने कालको आवाधाकाल कहते हैं।

५५२. प्र०—आवाधाकालका क्या नियम है ?

उ०—उदयकी अपेक्षा आयुकर्मके सिवाय शेष मान कर्मोंकी आवाधा एक कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थितिमें सो वर्ष प्रमाण होती है। अतः जिन कर्मकी स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण बँधती है, उसका आवाधाकाल सात हजार वर्ष है। जिन कर्मकी स्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है उसकी आवाधा चार हजार वर्ष है। जिसकी स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर है उसका आवाधाकाल तीन हजार वर्ष है। इसी तरह सब कर्मोंकी स्थितिमें आवाधाकाल जानना। जिस कर्मकी स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर है उसका आवाधाकाल अन्तर्मुहूर्त है।

५५३. प्र०—आयु कर्मकी आवाधाका क्या नियम है ?

उ०—आयु कर्मकी आवाधा अन्य कर्मोंकी तरह स्थितिवन्धके अनुसार नहीं होती। इसीसे आयुके स्थितिवन्धमें आवाधाकाल नहीं गिना जाता; क्योंकि आयुका आवाधाकाल पूर्व पर्यायमें ही बीत जाता है। अतः आयु कर्मके प्रथम निषेधकी स्थिति एक समय, दूसरे निषेधकी दो समय, इस तरह क्रमसे बढ़ते-बढ़ते अन्तिम निषेधकी स्थिति सम्पूर्ण स्थितिवन्ध प्रमाण होती है।

५५४. प्र०—आयु कर्मका आवाधाकाल कितना है ?

उ०—आयु कर्मका बन्ध अन्य कर्मोंकी तरह सदा नहीं होता। देव और नार-कियोंके छे महीने आयु शेष रहने पर और भोगभूमिया जीवोंके नौ महीना आयु शेष रहने पर उसके त्रिभागमें आयु कर्मका बन्ध होता है। कर्मभूमिया मनुष्य तिर्यञ्चोंके अपनी सम्पूर्ण आयुके त्रिभागमें आयु कर्मका बन्ध होता है। सो कर्मभूमिया जीवकी उत्कृष्ट आयु एक कोटी पूर्व होती है अतः एक कोटी पूर्वका त्रिभाग आयु कर्मका उत्कृष्ट आवाधाकाल है। त्रिभागके द्वारा आठ अपकर्ष कालोंमें आयु कर्मका बन्ध होता है। किन्तु यदि किसी भी अपकर्ष कालमें आयु नहीं बँधती तो किन्हीं आचार्यके मतसे एक आवलीके असंख्यातवें भाग और किन्हीं आचार्यके मतसे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आयुके अवशेष रहने पर उत्तर भवकी आयुका बन्ध होता है। अतः आयु कर्मका जघन्य आवाधाकाल अन्तर्मुहूर्त अथवा आवलीका असंख्यातवाँ भाग होता है।

५५५. प्र०—अपकर्षकाल किसे कहते हैं ?

उ०—वर्तमान आयुको अपकर्ष्य अर्थात् घटा-घटाकर आगामी परभरकी आयु जिस कालमें बंधे उसे अपकर्ष काल कहते हैं। जैसे, किसी बर्षमृमिया मनुष्यकी आयु इक्याना बर्ष है। उस आयुके दो भाग बीतने पर जब सत्ताईस बर्षकी आयु शेष रहनी है तो तीसरे भागके लगते ही प्रथम ममयमे लेकर अन्तर्मुहूर्त पाठ पर्यन्त प्रथम अपकर्ष काल होता है उसमें परभरकी आयुका अन्ध होना है। यदि न बंधे तो उनके भी दो भाग बीतने पर जब नौ बर्षकी आयु शेष रहनी है तब अन्तर्मुहूर्तके लिये दूसरा अपकर्षकाल आता है। उसमें भी आयु न बंधे तो तीन बर्षकी आयु शेष रहने पर तीसरे अपकर्ष कालमें आयु बंधनी है। उसमें भी न बंधे तो एक बर्ष आयु शेष रहने पर चौथे अपकर्ष कालमें आयु बंधती है। इस तरह मुख्यमान आयु का जितना प्रमाण हो उसके त्रिभाग त्रिभागमें आठ अपकर्षकाल होते हैं। आयुबधके योग्य परिणाम इन अपकर्ष कालोंमें ही होते हैं। किन्तु ऐसा कोई नियम नहीं है कि इन अपकर्षोंमें आयुका अन्ध होना ही चाहिये। अन्ध होना हो तो होता है, न होना हो तो नहीं होता।

५५६. प्र०—नियेक विमको कहते हैं ?

उ०—एक ममयमें जितने बर्षपरमाणु उदयमें आवें उनके समूहको नियेक कहते हैं।

५५७. प्र०—अनुभागद्वय विमको कहते हैं ?

उ०—जैसे भाजन दशैकके निमित्तमें दूध दशैक मदिग बन हो जाते हैं, उसमें ऐसी दधि हो जाती है कि उसके दशैक दूधको दोहा दा दहन मया हो जाता है। वैसे ही गंगादिमें निमित्तमें जो पुरुषाद बन्धन होते हैं उनमें ऐसी दधि होती है जिसमें उसकाग जानेपर वे जीवके आत्मादि बन्धन दोहा दा दहन पाग करने हैं। अन्ध होने समय बर्षमें ऐसी दधि के दशैक बन ही अनुभागद्वय है।

५५८. प्र०—अविभागी प्रविभेद विमको कहते हैं ?

उ०—दाहिने अविभागी मरको अविभागी प्रविभेद कहते हैं।

५५९. प्र०—वर्ग विमको कहते हैं ?

उ०—अविभागी प्रविभेदोंके समूहको वर्ग कहते हैं। पूर्ण उदय परमाणु अनेक अविभागी प्रविभेद होने हैं इसीसे उदय परमाणु एक वर्ग है।

५६०. प्र०—अधम वर्ग विमको कहते हैं ?

उ०—श्री अनुभाग वाले परमाणुको अधम वर्ग कहते हैं।

५६१. प्र०—प्राग्या किसको कहते हैं ?

उ०—समान जीवभागों प्रतिच्छेद से एक वर्गों के समूहकी वर्गणा कहते हैं ।

५६२. प्र०—अप्राग्य किसको कहते हैं ?

उ०—अप्राग्य वर्गों के समूह को अप्राग्य वर्गणा कहते हैं ।

५६३. प्र०—द्वितीय वर्गणा किसको कहते हैं ?

उ०—अप्राग्य वर्गों में एक अधिक अतिभागी प्रतिच्छेद से एक वर्गों के समूहको द्वितीय वर्गणा कहते हैं ।

५६४. प्र०—स्पर्शक किसको कहते हैं ?

उ०—उक्त प्रकारसे एक-एक अतिभागी प्रतिच्छेद अधिक वर्गों के समूह रूप वर्गणा जहाँ तक उपलब्ध हों, उन सब वर्गणाओं के समूहको स्पर्शक कहते हैं ।

५६५. प्र०—द्वितीय स्पर्शक किसको कहते हैं ?

उ०—प्रथम स्पर्शकके ऊपर क्रमसे एक-एक अतिभागी प्रतिच्छेद अधिकवाले वर्गों के समूह वर्गणा जब तक उपलब्ध हों, उन सब वर्गणाओं के समूहको द्वितीय स्पर्शक कहते हैं ।

५६६. प्र०—गुणहानि किसको कहते हैं ?

उ०—स्पर्शकों के समूहको गुणहानि कहते हैं ।

५६७ प्र०—गुणहानि आयाम किसको कहते हैं ?

उ०—एक गुणहानिके समयों के समूहको गुणहानि आयाम कहते हैं ।

५६८. प्र०—नाना गुणहानि किसको कहते हैं ?

उ०—गुणहानिके प्रमाणको नाना गुणहानि कहते हैं ।

५६९. प्र०—अन्योन्याभ्यस्तराशि किसको कहते हैं ?

उ०—नाना गुणहानि प्रमाण हुए रखकर उन्हें परस्परमें गुणनेसे जो प्रमाण होता है उसे अन्योन्याभ्यस्तराशि कहते हैं ।

५७०. प्र०—स्थिति रचनाकी अपेक्षा निषेकोंमें द्रव्यका प्रमाण लानेकी विधि क्या है ?

उ०—जैसे, किसी जीवने एक समयमें तिरसठ सौ परमाणुओं के समूहरूप समय-प्रवद्धका बंध किया और उसमें ४८ समयकी स्थिति पड़ी । गुणहानि ८; नाना-गुणहानि ६, अन्योन्याभ्यस्तराशि ६४ स्थापन करके सर्व द्रव्यको साधिक डेढ़ गुणहानिका भाग देने पर प्रथम निषेकका द्रव्य आता है । जैसे, तिरसठ सौ को

साधक बापूदा भाग देनेसे ५१२ आते हैं। प्रथम नियेक दो गुणहानिका नाग देनेसे चयका प्रमाण आता है। जैसे ५१२ को १६ का भाग देनेमें ३२ आता है यह चय है। सो द्वितीय आदि नियेकोका द्रव्य एक-एक चय घटना जानना। जैसे ५१२, ४८०, ४४८, ४१६, ३८४, ३५२, ३२०, २८८। इस तरह घटे घटते त्रिस नियेकमें प्रथम नियेकके आधा द्रव्य पाया जाये वहाँ द्वितीय गुणहानि प्रारम्भ होती है। जैसे दूसरी गुणहानिके प्रथम नियेकका द्रव्य २५६ है। यहाँ चय का प्रमाण प्रथम गुणहानिके आधा है अर्थात् १६ है। सो यहाँ भी द्वितीय आदि नियेकोका द्रव्य हममें एक-एक चय घटता हुआ जानना। जैसे, २५६ २४०, २२४, २०८, १९२, १७६, १६०, १४४। इस प्रकार प्रथम गुणहानिके द्वितीय गुणहानिका द्रव्य और चयका प्रमाण जैसे आधा होता है वैसे ही तृतीय आदि गुणहानियोंमें अपनमें पूर्व पूर्वकी गुणहानियोंमें द्रव्य और चयका प्रमाण हममें आधा आधा होता जाता है। इस तरह नाना गुणहानि प्रमाण १, १२०, ११२, १०४, ९६, ८८, ८०, ७२। चौथी गुणहानिके ६४ ६० ५६ ५२ ४८, ४४, ४०, ३६। पाँचवींमें ३२, ३०, २८, २६, २४ २०, १८। छठीमें १६, १५, १४, १२, ११, १०, ९।

५७१. प्र०—सर्व अथवा सर्व नियेक

५७१. प्र०—सत्य अथवा सत्ता विषयों पर क्या कहें ?

५७२. प्र०—आजके बिजने में क्या है ?

५७२. प्र०—सावके बिजने भेट है ?
उ०—सावके बिजने भेट है ?

५७३ प्र०—प्रार्थना गान प्रारंभ ।

૧૭૧ પ્રશ્ન—પ્રતિનિ શાસ્ત્ર વિગતો લખાવે છે :
૨૦—અનેક શાસ્ત્ર : ૧૦૦

[illegible]

५०४. प्र०—प्रदेश राज्य विभागों के अंतर्गत

३७५. प्र०—एक लड़की का नाम है—

३७१. प्र०—एक गांवसे कृषिकसे कृषिक विपणन प्रदर्शक एकत्र होना है।
 ३७२—प्रत्येक सरकारी जीव एवं मत्त संग्रहालय एक गांव
 में होना चाहिए।

२०—प्रत्येक शताब्दी की एक-एक सभा एक सभापति और दो सदस्यों द्वारा एक एक निर्देशिका द्वारा चलायी जाती है।

५८९. प्र०—संक्रमणके किम् उपायोपो पाँच भागहार कीनसे हैं ?

उ०—उद्वेलन, विघ्नात, अधःप्रवृत्त, गुण संक्रमण, सर्व संक्रमण, ये पाँच भागहार हैं ।

५९०. प्र०—उद्वेलन संक्रमण किसको कहते हैं ?

उ०—अधःप्रवृत्त आदि तीन करणोंके बिना ही उद्वेलन प्रकृतिके परमाणुओंमें उद्वेलन भागहारका भाग देने पर एक भाग मात्र परमाणु जहाँ अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं उसे उद्वेलन संक्रमण कहते हैं ।

५९१. प्र०—उद्वेलन प्रकृतियाँ कौन सी हैं ?

उ०—आहारक शरीर, बाहारक यंत्रोंपांग, सन्ध्यतत्त्व प्रकृति, मिश्र प्रकृति, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्रंगोपांग, उच्च गीत, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ये सैरह उद्वेलन प्रकृतियाँ हैं ।

५९२. प्र०—उद्वेलन प्रकृतियोंकी उद्वेलना कौन करता है ?

उ०—शुरूकी चार प्रकृतियोंकी उद्वेलना तो चारों गतियोंके मिथ्यादृष्टि जीव करते हैं । फिर छे प्रकृतियोंकी उद्वेलना एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव करते हैं । शेष तीन प्रकृतियोंकी उद्वेलना तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव करते हैं ।

५९३. प्र०—विध्यात संक्रमण किसको कहते हैं ?

उ०—मन्द विशुद्धि वाले जीवके जिनका बन्ध नहीं पाया जाता, उन विवक्षित प्रकृतियोंके परमाणुओंमें विध्यात भागहारका भाग देनेपर एक भाग मात्र परमाणु जहाँ अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं उसे विध्यात संक्रमण कहते हैं ।

५९४. प्र०—अधःप्रवृत्त संक्रमण किसको कहते हैं ?

उ०—बंधनेवाली प्रकृतियोंमें अधःप्रवृत्त भागहारका भाग देने पर एक भाग मात्र परमाणु जहाँ बंधको प्राप्त अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं उसे अधःप्रवृत्त संक्रमण कहते हैं ।

५९५. प्र०—गुण संक्रमण किसको कहते हैं ?

उ०—विवक्षित अशुभ प्रकृतियोंके परमाणुओंमें गुण संक्रमण भागहारका भाग देने पर जहाँ प्रति समय असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे परमाणु अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं उसे गुण संक्रमण कहते हैं ।

५९६. प्र०—सर्व संक्रमण किसको कहते हैं ?

उ०—प्रति समय विविधित प्रकृतिके परमाणु अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते करते जहाँ अन्त समयमें अन्तके बाण्डरकी अन्तिम फाली रूप सभी परमाणु अन्य प्रकृतिरूप परिणमन करते हैं उसे सर्व संक्रमण कहते हैं।

११७ प्र०—भागहारोंका प्रमाण क्या है ?

उ०—सर्व संक्रमण भागहारका प्रमाण तो एक है। उससे अतंश्यात गुणा गुण संक्रमण भागहारका प्रमाण है। उससे भी अतंश्यात गुणा उत्तरांग और अतंश्यात भागहारका प्रमाण है। उससे भी अतंश्यातगुणा अथः प्रवृत्त तन्त्र भागहारका प्रमाण है। और उससे भी अतंश्यातगुणा उद्देगन संक्रमण भागहारका प्रमाण है।

११८ प्र०—उपनाम करण कितने कहते हैं ?

उ०—विवक्षित प्रकृतिके जो निपेक्ष उद्देगावलीमें बाहर है, उनके परमाणुओं-के उद्देगावलीमें आनेके अयोग्य करनेका नाम उपनाम अथवा उपनाम रण है।

११९ प्र०—उपनामके कितने भेद हैं ?

उ०—दो हैं—एक अन्तरकरण रूप उपनाम और दूसरा सदस्य रूप उपनाम।

१२० प्र०—अन्तरकरण रूप उपनाम किसको कहते हैं ?

उ०—अन्तरकरणका सदस्य पदले कहा है। अन्तरकरणके द्वारा अनामी के उदय आने योग्य बर्त परमाणुओंको आगे-पीछे उदय आने योग्य करते।

१२१ प्र०—सदस्य रूप उपनाम किसको कहते हैं ?

उ०—आगामी भागमें उदय आने योग्य निवेष्टित होनेके लिये कहते हैं।

१२२ प्र०—उपनाम भाव और उपनाम करणमें क्या अन्तर है ?

उ०—उपनाम भाव तो आगामी पदका ही होता है किन्तु उपनाम करण भाव प्रकृतिको ही होता है। तथा उपनाम करण भाव ही उपनाम करण ही होता है किन्तु उपनाम भाव व्यापक गुणध्यान पदका ही होता है।

१२३ प्र०—निर्वातकरण किसको कहते हैं ?

उ०—विवक्षित प्रकृति के परमाणुओंके अन्तरकरण करनेके लिये उपनाम भाव आनेके योग्य न होना निर्वातकरण है।

१२४ प्र०—निर्वातकरण किसको कहते हैं ?

६२० प्र०—पाप प्रकृतियाँ कितनी और कौन-सी हैं ?

उ०—पापिना कर्मोंसे ४७ प्रकृतियाँ, भौतयोग, अमात्यादिभौत, नरक जायु, नरकगति, नरकमग्नान्तरात्, विविधता १, निर्दिष्टमग्नान्तरात्, पञ्चैन्द्रिय जाति ४ जातियाँ, दोष पांच संख्यात, दोष पांच संजनन, अशुभ कर्म ५, अशुभ रस ५, अशुभ गण २, अशुभ मर्म ८, उपादान, अमममय विज्ञायोगिनि, स्यावय, सुम्भ, अपगास, माधारण, अग्निर, अशुभ, सुभंग, दुःखार, अनारिप, अपगातीति ये पाप प्रकृतियाँ हैं ।

६२१. प्र०—पुद्गलविपाको कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिसका फल पुद्गलमें हो । जैसे शरीर नामकर्मोंके उदयसे पुद्गल ही शरीर रूप होकर परिणमन करता है ।

६२२. प्र०—पुद्गलविपाको प्रकृति कितनी और कौन-सी हैं ?

उ०—पांच शरीर, पांच वन्धन, पांच संघात, छे संरूपान, तीन अंगोपांग, छे संहनन, पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श, निर्माण, आतप, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, प्रत्येक, साधारण, अगुमलघु, उपघात, परघात, ये वासठ प्रकृतियाँ पुद्गल विपाकी हैं ।

६२३. प्र०—भवविपाको कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिसका फल मनुष्यादि भव रूप हो ।

६२४. प्र०—भवविपाको प्रकृतियाँ कौन-सी हैं ?

उ०—चारों आयुर्कर्म भवविपाकी हैं ।

६२५. प्र०—क्षेत्रविपाको कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिसके फलसे परलोकको गमन करते समय विशाह गतिमें जीवका आकार पूर्व शरीरका-सा बना रहे ।

६२६. प्र०—क्षेत्रविपाकी प्रकृतियाँ कौन-सी हैं ?

उ०—चारों आनुपूर्वी नामकर्म क्षेत्र विपाकी हैं ।

६२७. प्र०—जीवविपाकी कर्म किसको कहते हैं ?

उ०—जिसका फल जीवमें हो ।

६२८. प्र०—जीवविपाकी प्रकृतियाँ कितनी और कौन-सी हैं ?

उ०—दो वेदनीय, दो गोत्र, धातिया कर्मोंकी ४७ प्रकृतियाँ तथा नामकर्मकी सत्ताईस (चार गति, पांच जाति, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, अप्रशस्त

विहायोमति, मत्त, स्याधर, वादर, सूधम, पर्याप्त, अपर्याप्त, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय, अनादेय, मयस्वीति, अयस्वीति और तीर्थक्षुर) ये अष्टोत्तर प्रष्टिमी धोवविपाकी हैं ।



१३

६२९. प्र०—ज्ञानावरण कर्मके कितने बन्ध हैं ?

उ०—ज्ञानावरण कर्मका एक ही बन्धरूपान है क्योंकि ज्ञानावरण कर्मकी पाँचों प्रष्टिमी दगवें गुणस्थान तक प्रत्येक जीवके बंधनी है और उगवे बाद पाँचों ही नहीं बंधती ।

६३०. प्र०—दर्शनावरण कर्मके कितने बन्धरूपान हैं ?

उ०—तीन—मौल्युक्तिक, छंद्युक्तिक और धारप्रष्टुक्तिक ।

६३१. प्र०—दर्शनावरणके मौल्युक्तिक बन्धरूपानका स्वामी कौन है ?

उ०—मिथ्यादृष्टि और भ्रामादन भ्राम्यदृष्टि जीवोंके दर्शनावरण कर्मकी भी प्रष्टिमी बंधनी है । आगेके गुणस्थानोंमें निदानिद्रा, प्रलयप्रलय और ज्ञान-पुष्टिवा बन्ध नहीं होता ।

६३२. प्र०—दर्शनावरणके छंद्युक्तिक स्वामिका स्वामी कौन है ?

उ०—भ्राम्यमिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें छंद्युक्तिक स्वामिका स्वामी प्रथम जगत्तक छंद्युक्तिक निदानिद्राके निद्राव संन हो प्रष्टिमीका बन्ध होता । बाद निद्रा और प्रलयका बन्ध नहीं होता है ।



१४

६३३. प्र०—कर्मस्थिति विभागों कितने हैं ?

उ०—तीन गुणस्थानोंमें जिन कर्मस्थितियोंका बन्ध छंद्युक्तिक स्वामी कर्मस्थिति की ही उग जगत्तक एक ही उग प्रष्टिमीका बन्ध छंद्युक्तिक स्वामी पाया जाता है, आगेके विभागों की गुणस्थानोंमें उन प्रष्टिमीके बन्ध छंद्युक्तिक स्वामी बन्ध नहीं होता । इसी को कर्मस्थिति कहते हैं ।

६३४. प्र०—मिथ्यात्व गुणस्थानमें किन प्रकृतियोंका बन्ध होता है ?

उ०—मिथ्यात्व गुणस्थानमें नीचेकर, आताप, अगीर और आतारक श्रंगोपांग इन तीन प्रकृतियोंका बन्ध भवति होता । अतः आदर्श क्षमोंसे बना योग्य एक ही वीर्य प्रकृतियोंमें से तीन घटाने पर ११७ प्रकृतियों बन्ध योग्य है ।

६३५. प्र०—तीर्थंशुर प्रकृतिका बन्ध किसके होता है ?

उ०—नीचे असंयत सम्पानगुष्टि गुणस्थानमें स्वेकर मातते अप्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त ही गेयलो या भुगोत्वयोके गरणोंके निम्न तीर्थंकर प्रकृति बन्धन प्रारम्भ करते हैं ।

६३६. प्र०—मिथ्यात्वगुणस्थानमें किन प्रकृतियोंकी बन्ध व्युच्छिति होती है ?

उ०—मिथ्यात्व, कृष्टक संस्थान, नांसक वेर, अगंप्राप्तानु पादिका संहनन, एकेन्द्रिय, स्वावर, आताप, सूक्ष्म, अपगति, साधारण, दोइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय जाति, नरक गति, नरकगत्यानुपूर्वी और नरकगु, इन सोलह प्रकृतियोंके बन्धका कारण मिथ्यात्व ही है । अतः मिथ्यात्व गुणस्थानसे आगे इनका बन्ध नहीं होता ।

६३७. प्र०—सासादन गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है ?

उ०—पहले गुणस्थानमें जो ११७ का बन्ध होता है उनमेंसे मिथ्यात्व गुणस्थानमें जेनकी व्युच्छिति होती है उन सोलह प्रकृतियोंको घटाने पर सासादन में १०१ प्रकृतियाँ बन्ध योग्य हैं ।

६३८. प्र०—सासादन गुणस्थानमें किन प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छिति होती है ?

उ०—अनन्तानुबन्धी चार, स्थानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, दुभंग, दुस्वर, अनादेय, न्यग्रोध परिमण्डल स्वाति कुब्जक वामन ये चार संस्थान, वज्रनाराच नाराच अर्धनाराच कीलक ये चार संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद, नीचगोत्र, तिर्यञ्च गति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, तिर्यचायु, उद्योत ये पञ्चीस प्रकृतियाँ अनन्तानुबन्धी कपायके उदयसे बंधती हैं । अतः सासादन गुणस्थानसे आगे इनका बन्ध नहीं होता ।

६३९. प्र०—तीसरे मिश्र गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है ?

उ०—दूसरे गुणस्थानमें बन्ध योग्य प्रकृतियाँ १०१ हैं । उनमेंसे व्युच्छित हुई पञ्चीस प्रकृतियोंको घटाने पर शेष ७६ बचती हैं । किन्तु इस गुणस्थानमें

प्रकृतियों प्रत्येक विधि-के अन्तर्गत है। अतः छठे गुणस्थानके अन्तर्गत प्रत्येक प्रकृति व्युत्पत्ति हो पाती है।

६४०. प्र०—सातवें गुणस्थानमें कन्ध यौग्य प्रकृतियों कितनी हैं ?

उ०—छठे गुणस्थानमें ६२ प्रकृतियोंका बन्ध होता है और ६ ती अन्य व्युत्पत्ति होती है अतः ६२मेंसे छठे घटानेमें शेष ५६ बनती है। किन्तु सातवें आहारक शरीर आहारक श्रंगोपांगका बन्ध नष्ट जानमें अन्ध यौग्य प्रकृतियों ५९ हैं।

६४८. प्र०—सातवें गुणस्थानमें कितन प्रकृतियोंकी बन्ध व्युत्पत्ति होती है ?

उ०—सातवें गुणस्थानके अन्तमें एक देवायुकी बन्ध व्युत्पत्ति होती है।

६४९. प्र०—आठवें अपूर्वकरण गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है ?

उ०—सातवें गुणस्थानमें ५९ प्रकृतियोंका बन्ध होता है। उनमेंसे व्युत्पत्ति हुई देवायुकी घटानेपर ५८ प्रकृतियोंका बन्ध आठवेंमें होता है।

६५०. प्र०—आठवें गुणस्थानमें कितन प्रकृतियोंकी बन्ध व्युत्पत्ति होती है ?

उ०—आठवें गुणस्थानके प्रथम भागसे निद्रा और प्रचलाकी बन्ध व्युत्पत्ति होती है। छठे भागमें तीर्थङ्कर, निर्माण, प्रशस्त विहायोगति, प्रवेन्द्रिय, तैजस, कामर्ण, आहारक, श्रंगोपांग, समचतुरस्र संस्थान, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक, वैक्रियिक श्रंगोपांग, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, त्रस, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय इन तीस प्रकृतियोंकी व्युत्पत्ति होती है। और अन्तिम भागमें हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी व्युत्पत्ति होती है।

६५१. प्र०—नौवें अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है ?

उ०—आठवें गुणस्थानमें बंधनेवाली ५८ प्रकृतियोंमें व्युत्पत्ति हुई ३६ प्रकृतियोंको घटानेपर शेष रहें वाईस प्रकृतियोंका बन्ध नौवें गुणस्थानमें होता है।

६५२. प्र०—नौवें गुणस्थानमें कितन प्रकृतियोंकी बन्धव्युत्पत्ति होती है ?

उ०—अनिवृत्तिकरणके पाँच भागोंमें क्रमसे पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, संज्वलन मान, संज्वलन माया और संज्वलन लोभकी बन्ध व व्युत्पत्ति होती है।

६५३. प्र०—दसवें सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है ?

पूर्वमि गुणस्थानकी गणना में प्रकृतियोंकी उदय के विषयगत गुणस्थानके अन्तिम सम्यक्त्व पावन प्रकृतिमेंसे उदय प्रकृतिमेंसे होता है, यद्यपि चार आदि और सातार प्रकृतियों की उदय प्रकृतिमेंसे गणना इन गुणस्थानमें होती है।

६६१. प्र०—सासादन गुणस्थानमें उदय कितनी प्रकृतियोंका होता है ?

उ०—पाठके गुणस्थानमें जो ११० प्रकृतियोंका उदय होता है, उनमेंसे व्युच्छिन्न हुई पावन प्रकृतियोंकी गणनापर शेष ११२ रहती है। परन्तु सासादनमें नरक गत्यानुपूर्विका उदय न होनेसे १११ प्रकृतियों उदययोग्य होती हैं।

६६२. प्र०—सासादन गुणस्थानमें उदय व्युच्छिन्न कितनी प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—सासादन गुणस्थानके अन्तिम समयमें अनन्तानुसंगी क्रोध मान माया लोभ, एकेन्द्रिय आदि चार जाति और स्थावर इन नौ प्रकृतियोंकी उदय व्युच्छिन्न होती है।

६६३. प्र०—मिश्र गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका उदय होता है।

उ०—दूसरे गुणस्थानमें १११ प्रकृतियोंका उदय होता है। उनमेंसे व्युच्छिन्न नौ प्रकृतियोंको घटानेपर शेष १०२ मेंसे नरकगत्यानुपूर्विक सिवाय (क्योंकि वह दूसरे गुणस्थानमें घटाई जा चुकी है) शेष तीन आनुपूर्वी घटानेपर शेष वहीं ९९ प्रकृतियोंमें एक सम्यक् मिथ्यात्व प्रकृतिका उदय यहाँ होनेसे तीसरे गुणस्थानमें उदययोग्य प्रकृतियाँ १०० हैं।

६६४. प्र०—मिश्र गुणस्थानमें आनुपूर्विका उदय क्यों नहीं होता ?

उ०—तीसरे गुणस्थानमें मरण न होनेसे किसी भी आनुपूर्विका उदय नहीं होता।

६६५. प्र०—तीसरे गुणस्थानमें उदय व्युच्छिन्न किन प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—एक सम्यक् मिथ्यात्व प्रकृतिकी उदय व्युच्छिन्न तीसरे गुणस्थानमें होती है ?

६६६. प्र०—चौथे गुणस्थानमें उदय कितनी प्रकृतियोंका होता है ?

उ०—तीसरे गुणस्थानमें १०० प्रकृतियोंका उदय होता है। उनमेंसे व्युच्छिन्न प्रकृति सम्यक् मिथ्यात्वको घटानेपर ९९ शेष रहती हैं। इनमें चारों आनुपूर्वी और सम्यक्त्व प्रकृतिकी मिलाने से १०४ प्रकृतियोंका उदय चौथे गुणस्थानमें होता है।

६६७. प्र०—चौथे गुणस्थानमें उदय व्युच्छिन्न किन प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, नरकायु, देवायु, नरकगति, देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक अंगोपांग, चारों आनुपूर्वी, दुर्भंग, अनादेय, अक्षयस्वीति, इन सातवहु प्रकृतियोंकी उदय व्युच्छिति चौथे अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थानमें होती है।

६६८. प्र०—पाँचवें गुणस्थानमें उदय कितनी प्रकृतियोंका होता है ?

उ०—चौथे गुणस्थानमें जो १०४ प्रकृतियोंका उदय कहा है, उनमेंसे द्युच्छिन्न हुई १७ प्रकृतियोंको घटानेपर शेष ८७ प्रकृतियोंका उदय होता है।

६६९. प्र०—पाँचवें गुणस्थानमें उदय द्युच्छिति किन प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, तिर्यग्जायु, तिर्यग्गति, उद्योत, शीघ्र शीघ्र इन आठ प्रकृतियों की उदय व्युच्छिति पाँचवें देवविरत गुणस्थानमें होती है।

६७०. प्र०—छठे गुणस्थानमें उदय कितनी प्रकृतियोंका होता है ?

उ०—पाँचवें गुणस्थानमें ८७ प्रकृतियोंका उदय कहा है। उनमेंसे द्युच्छिन्न प्रकृति आठको घटानेपर शेष रही ७९ प्रकृतियोंमें आहारक शरीर और आहारक अंगोपांगकी मिलानेसे ८१ प्रकृतियोंका उदय छठे गुणस्थानमें होता है।

६७१. प्र०—छठे गुणस्थानमें उदय द्युच्छिति किन प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, रस्यानमृद्धि, आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग इन पाँच प्रकृतियोंको उदय द्युच्छिति छठे प्रसन्न गीया गुणस्थानमें होती है।

६७२. प्र०—सातवें गुणस्थानमें उदय कितनी प्रकृतियोंका होता है ?

उ०—छठे गुणस्थानमें जो ८१ प्रकृतियोंका उदय होता है, उनमेंसे द्युच्छिन्न हुई पाँच प्रकृतियोंकी घटानेपर शेष ७६ प्रकृतियोंका उदय होता है।

६७३. प्र०—आठवें गुणस्थानमें उदय द्युच्छिति किन प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—अर्धनागाय, बीलक, अर्धप्रतापुपाटिका गह्वर, गह्वरक प्रकृति इन चार प्रकृतियोंकी उदय द्युच्छिति आठवें अग्रमत्त गीया गुणस्थानमें होती है।

६७४. प्र०—आठवें गुणस्थानमें उदय किनकी प्रकृतियोंका होता है ?

उ०—आठवें गुणस्थानमें जो ७६ प्रकृतियोंका उदय कहा है, उनमेंसे द्युच्छिन्न हुई चार प्रकृतियोंकी घटानेपर शेष ७२ प्रकृतियोंका उदय होता है।

६७५. प्र०—आठवें गुणस्थानमें उदय द्युच्छिति किन प्रकृतियोंकी होती है ?

उ०—नरकगत्यनुपूर्वी विना १४३ का । तिसरे अंशमें सम्यग्दृष्टी की जा
१४३ का ही सत्त्व होता है ।

६९४. प्र०—तीसरे गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका सत्त्व रहता है ?

उ०—एक प्रकृतिमानु ५१ ।

६९५. प्र०—छठे गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका सत्त्व रहता है ?

उ०—नरकगत्य और तिर्यञ्चगत्य विना १४५ का । तिस्रु धार्मिक सम्म्यग्दृष्टी की अंशों १२९ का ही सत्त्व रहता है ।

६९६. प्र०—आठवें गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका सत्त्व रहता है ?

उ०—छठे गुणस्थानकी तरह १४६ का अथवा १३९ का ।

६९७. प्र०—आठवें गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका सत्त्व रहता है ?

उ०—आठवें गुणस्थानमें दो श्रेणी प्राग्गम होती है—उपगत श्रेणि और क्षपक श्रेणि । द्वितीयोपगत सम्यग्दृष्टी उपगत श्रेणि ही पहली है । यतः उनके सातवें गुणस्थानमें जो १४६ का सत्त्व रहता है, उनमेंमें अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभको घटानेपर १४२ का सत्त्व होता है । तिस्रु धार्मिक सम्म्यग्दृष्टी यदि उपगत श्रेणि कहना है, तो उसके सातवें गुणस्थानकी तरह १३९ का सत्त्व होता है । और क्षपक श्रेणिवालेके अनन्तानुबन्धी ४, दर्शन मोहनीय ३, और मनुष्यादिके सिवाय तीन आयुके विना १३८ का ही सत्त्व होता है ।

६९८. प्र०—नीवें गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंका सत्त्व होता है ?

उ०—आठवें गुणस्थानकी तरह इस गुणस्थानमें भी उपगत श्रेणिवाले द्वितीयोपगत सम्यग्दृष्टिके १४२, धार्मिक सम्म्यग्दृष्टिके १२९ और क्षपक श्रेणिवालेके १३८ प्रकृतियोंका सत्त्व होता है ।

६९९. प्र०—नीवें गुणस्थानमें कितनी प्रकृतियोंकी सत्त्व व्युच्छित्ति होती है ?

उ०—नीवें गुणस्थानके प्रथम भागमें नरकगत्य, तिर्यञ्चगत्य, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय दोइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय जाति, स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, उद्योत, आतप, साधारण, सूक्ष्म और स्यावर इन सोलह प्रकृतियोंकी सत्त्व व्युच्छित्ति होती है । दूसरे भागमें अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, इन आठ प्रकृतियोंकी सत्त्व व्युच्छित्ति होती है । तीसरे भागमें नपुंसक वेद, चौथे भागमें स्त्रीवेद, पाँचवें भाग में छे नोत्पाय, छठे भागमें पुरुषवेद, सातवेंमें संज्वलन क्रोध, आठवेंमें संज्वलन मान और नीवें भागमें संज्वलन माया इस प्रकार नीवें गुणस्थानमें छत्तीस

प्रवृत्तियोंको मत्त्व व्युत्पत्ति होती है। यह मत्त्व व्युत्पत्ति धारक श्रेणियोंके ही होती है।

७००. प्र०—दमवें गुणस्थानमें कितनी प्रवृत्तियोंका मत्त्व रहता है ?

उ०—दमवेंमें नीचें गुणस्थानकी तरह उपानम श्रेणियोंके द्वितीयोपानम सम्प्रवृत्तिके १४२ और धाविक सम्प्रवृत्तिके १३९ का मत्त्व रहता है। यदा धारक श्रेणियोंके नीचें गुणस्थानमें जो १३८ प्रवृत्तियोंका मत्त्व है उनमेंमें व्युत्पत्ति हुई ३६ प्रवृत्तियोंको घटाने पर शेष रहे। १०२ प्रवृत्तियोंका मत्त्व रहता है।

७०१. प्र०—दमवें गुणस्थानमें कितनी प्रवृत्तियोंकी मत्त्व व्युत्पत्ति होगी है ?

उ०—एक संज्ञकलन लोभकी व्युत्पत्ति होगी है।

७०२. प्र०—दमवें गुणस्थानमें मत्त्व कितनी प्रवृत्तियोंका होगा है ?

उ०—दमवें गुणस्थानकी तरह द्वितीयोपानम सम्प्रवृत्तिके १४२ और धाविक सम्प्रवृत्तिके १३९ का मत्त्व रहता है। इस गुणस्थानमें धारक श्रेणियोंकी नहीं है।

७०३. प्र०—दमवें गुणस्थानमें कितनी प्रवृत्तियोंका मत्त्व रहता है ?

उ०—दमवें गुणस्थानमें धारक श्रेणियोंके जो १०० प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है उनमेंमें व्युत्पत्ति प्रवृत्ति संज्ञकलन नामकी घटाने पर शेष १०१ प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है।

७०४. प्र०—दमवें गुणस्थानमें मत्त्व व्युत्पत्ति कितनी प्रवृत्तियोंकी होगी है ?

उ०—दमवें गुणस्थानमें उच्च व्युत्पत्तियोंकी तरह १०१ का मत्त्व होगा है। यदा धारक श्रेणियोंके जो १०० प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है उनमेंमें व्युत्पत्ति प्रवृत्ति संज्ञकलन नामकी घटाने पर शेष १०१ प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है।

७०५. प्र०—दमवें गुणस्थानमें मत्त्व कितनी प्रवृत्तियोंका होगा है ?

उ०—दमवें गुणस्थानमें जो १०१ का मत्त्व होगा है उनमेंमें व्युत्पत्ति प्रवृत्ति संज्ञकलन नामकी घटाने पर शेष ८५ प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है।

७०६. प्र०—दमवें गुणस्थानमें कितनी प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है ?

उ०—दमवें गुणस्थानमें दमवें गुणस्थानकी तरह ८५ प्रवृत्तियोंका मत्त्व होगा है परन्तु उपानम नामके ७२ और धाविक सम्प्रवृत्तिके १३९ प्रवृत्तियोंका मत्त्व व्युत्पत्ति (मत्त्व) हो जानेसे जीवका मत्त्व हो जाता है।

७०७. प्र०—चीदहवें गुणत्वानमें किन प्रकृतियोंकी सन्ध व्युच्छित्ति होती है ?

उ०—चीदहवें अयोगकेवली गुणत्वानके उपान्त्य समयमें पाँच शरीर, पाँच वन्धन, पाँच संधात, छे संस्थान, तीन अंगोपांग, छे संज्वलन, पाँच वर्ण, दो देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त और अप्रशस्त विहायोगति, दुर्गंग, निर्माण, अयशःकीर्ति, अनादेय, प्रत्येक, अपर्याप्त, अगुणलघु, उवधात, परधात, उच्छ्वास, एक वेदनाय, नीच गोत्र इन बहत्तर प्रकृतियोंकी सत्त्व व्युच्छित्ति होती है। और अन्त समयमें एक वेदनीय, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, सुभग, वस, वादर, पर्याप्त, आदेय, यशःकीर्ति, तीर्थकर, मनुष्यायु और उच्च गोत्र, मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन तेरह प्रकृतियोंकी सत्त्व व्युच्छित्ति होती है।

७०८. प्र०—किन प्रकृतियोंकी वन्धव्युच्छित्ति उदयव्युच्छित्तिके पीछे होती है ?

उ०—देवायु, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक अंगोपांग, आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग, अयशःकीर्ति इन आठ प्रकृतियोंकी उदय व्युच्छित्ति पहले होती है, पीछे वन्धव्युच्छित्ति होती है।

७०९. प्र०—किन प्रकृतियोंकी उदयव्युच्छित्ति और वन्धव्युच्छित्ति एक साथ होती है ?

उ०—मिथ्यात्व, भय, जुगुप्सा, हास्य, रति, पुरुषवेद, संज्वलन लोभ के विना १५ कपाय, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, एकेन्द्रिय आदि चार जाति, साधारण, अपर्याप्त इन इकतीस प्रकृतियोंका वन्ध और उदय दोनों एक साथ व्युच्छिन्न होते हैं।

७१०. प्र०—किन प्रकृतियोंकी उदयव्युच्छित्ति वन्धव्युच्छित्तिके पीछे होती है ?

उ०—पूर्वोक्त ८ + ३१ = ३९ प्रकृतियोंसे शेष जो इक्यासी प्रकृतियाँ रहती हैं उनका वन्ध व्युच्छेद पहले और उदय व्युच्छेद पीछे होता है।

७११. प्र०—परोदयसे वंधनेवाली प्रकृतियाँ कौन-सी हैं ?

उ०—तीर्थकर, नरकायु, देवायु, नरक गति, देवगति, नरक गत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक अंगोपांग, आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग ये ग्यारह प्रकृतियाँ परोदयसे वंधती हैं, अर्थात् तीर्थकर प्रकृतिके उदयवालेके तीर्थकरका वन्ध नहीं होता। इसी तरह नारकीके नरकायुका और देवके देवायुका वन्ध नहीं होता।

1. The first part of the paper is devoted to the study of the properties of the function $f(x)$ defined by the equation

$$f(x) = \int_0^x f(t) dt$$

2. The second part of the paper is devoted to the study of the properties of the function $f(x)$ defined by the equation

$$f(x) = \int_0^x f(t) dt$$

विषयानुक्रमणी

अ	प्रश्नंक्र	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमे कितनी	
अंगप्रविष्ट	३०२	प्रवृत्तियोंका बन्ध	६११
अंगप्रविष्टके भेद	३०४	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें कित	
अंगबाह्य	३०३	प्रवृत्तियोंकी बन्ध व्युत्पत्ति	६१२
अंगुलके भेद	२९	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमे	
अक्षरारम्भक श्रुत	३००	कितनी प्रवृत्तियोंका उदय	६३६
अक्षरारम्भक श्रुतके भेद	३०१	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें कितनी	
अक्षरारम्भ नामवर्म	४९९	प्रवृत्तियोंकी उदय व्युत्पत्ति	६३७
अपात्री बर्म	६१४	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमे कितनी	
अपात्री बर्म कितने	६१६	प्रवृत्तियोंका गत्व	६९८
अवशु दर्शन	३४२	अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमे	
अवगन्तव्य	७४१	गत्वव्युत्पत्ति	६९९
अनिवृत्तिप्रकारकी	७४२	अनुभाग बाण्डक	७२९
अक्षरारम्भ	२८	अनुभाग बाण्डकोचरण बान	७३०
अक्षरारम्भ	१२८	अनुभाग बन्ध	३९७
अक्षरारम्भ और		अनुभाग गत्व	३९८
अक्षरारम्भमें अन्तर	१३०	अनुयोगद्वार विन्दु	३९९
अक्षरारम्भ संक्रमण	४९४	अक्षरारम्भका प्रयोग	३९८
अक्षरारम्भ	४९	अक्षरारम्भ	३९९
अक्षरारम्भ	७२३	अक्षरारम्भ	३९९
अक्षरारम्भक श्रुत	२९९	अक्षरारम्भमें कितनी बन्ध	३९९
अक्षरारम्भक श्रुत	४४६	अक्षरारम्भ बर्म	३९९
अक्षरारम्भ उपयोग	१०९	अक्षरारम्भ बर्मके भेद	३९९
अक्षरारम्भ बन्ध	७२१	अक्षरारम्भ उपयोग	३९९
अक्षरारम्भ नामवर्म	५२४	अक्षरारम्भक श्रुत	३९९
अक्षरारम्भ की बर्म	३८४	अक्षरारम्भ	३९९
अक्षरारम्भकी बर्म गुणस्थान	३८६	अक्षरारम्भ	३९९
अक्षरारम्भक श्रुत गुणस्थान	१३१	अक्षरारम्भ	३९९
अक्षरारम्भक श्रुत गुणस्थानका		अक्षरारम्भ	३९९
अक्षरारम्भ	४९७		

अपूर्वकरण गुणस्थानमें कितनी		अयोगकेवली गुणस्थानका	
प्रकृतियोंका बन्ध	६४२	अन्तर काल	
अपूर्वकरण गुणस्थानमें किन		अयोगकेवली गुणस्थान कितने हैं	४२८
प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति	६५०	अयोगकेवली गुणस्थान कीन भाव	४३६
अपूर्वकरण गुणस्थानमें कितनी		अयोगकेवली गुणस्थानमें बन्ध	६५८
प्रकृतियोंका उदय	६७४	अयोगकेवली गुणस्थानमें उदय	६८६
अपूर्वकरण गुणस्थानमें उदय		उदयव्युच्छित्ति	
व्युच्छित्ति	६७५	अयोगकेवली गुणस्थानमें सत्त्व	६८७
अपूर्वकरणमें कितनी		अयोगकेवली गुणस्थानमें सत्त्व व्युच्छित्ति	७०६
प्रकृतियोंका सत्त्व	६९७	सत्त्व व्युच्छित्ति	७०७
अपूर्वकरण आदि चार		अर्धच्छेद	४०
उपशमक गुणस्थान कीन		अर्धनाराच संहनन	४२०
भावरूप हैं।		अल्पबहुत्वानुयोगमें	
अपर्याप्त नामकर्म	४३५	किसका कथन	
अप्रतिष्ठित प्रत्येक	५१२	अवग्रह ज्ञान	३९६
अप्रत्याख्यानावरण	२३९	अवधिज्ञान	२९१
अप्रमत्तविरत गुणस्थान	४६५	अवधिज्ञानके भेद	३०७
अप्रमत्तविरत गुणस्थानके भेद	११६	अवधि दर्शन	३०८
अप्रमत्तविरत गुणस्थानका	११७	अवायज्ञान	३४३
अन्तरकाल	४२६	अविगामी प्रतिच्छेद	२९३
अप्रमत्तविरत गुणस्थानमें		अवसर्पिणी उत्सर्पिणी	५५८
बन्धयोग्य प्रकृतियां	६४७	अवसर्पिणी उत्सर्पिणीके भेद	६५
अप्रमत्तविरत गुणस्थानमें		अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थान	६६
बन्धव्युच्छित्ति	६४८	अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थानमें	१११
अप्रमत्तविरत गुणस्थानमें उदय	६७२	अन्तर काल	
उदयव्युच्छित्ति	६७३	अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थानमें भाव	४२६
अप्रमत्तविरत गुणस्थानमें सत्त्व	६९६	अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थान कितने	४१६
अप्रशस्त उपशम	३६६	काल तक होते हैं	
अप्रमत्तविरतोंकी संख्या	४००	अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थानमें	
अयशःकीर्ति नामकर्म	५२६	बन्ध	
अयोगकेवली गुणस्थान	१३७	अविरत सम्यग्दृष्टी गुणस्थानमें	६४१
अयोगकेवली गुणस्थानका काल	४२१	बन्ध व्युच्छित्ति	६४२

अविरत सम्पद्दृष्टो गुणस्थानमे उदय	६६६	आहार पर्याप्ति	१५९
अविरत सम्पद्दृष्टो गुणस्थानमे		आहारक	३८३
उदय व्युत्पत्ति	६६७	आहारकके गुणस्थान	३८५
अविरत सम्पद्दृष्टो गुणस्थानमे		आहारक वायवोग	३९७
मत्त्व	६९१	आहारकमिथ वायवोग	३९८
अविरत सम्पद्दृष्टो गुणस्थानमे		आहारक और आहारकमिथ	
मत्त्व व्युत्पत्ति	६९२	वायवोग किमके ?	३९१
अविरत सम्पद्दृष्टो गुणस्थानको		इ	
एक समय कम तैतीय माग		इतर निगोद	२४४
आयुषान्त्रोमे क्यों उत्पन्न		इन्द्रिय	२०५
कराया	४१७	इन्द्रिय पर्याप्ति	१६१
अयुष नाम	५१८	इन्द्रियके भेद	२०६
अयुषम	३३६	इगुनि	२६७
अयुषम सृष्टिवा गहनन	४९२	ईशानान	२९२
अयुष नामकम	५१६	उ	
आ		उत्पत्त्याग नामकम	५०३
आहारयोनिवे भेद	१७३	उत्पत्त्याग	७४४
आहार	७३५	उत्पत्त्याग	५८२
आयुष नामकम	५०३	उत्पत्त्याग और उत्पत्त्यागके विषये	
आयुषगुण	३४	उत्पत्त्याग और उत्पत्त्यागके विषये	
आयुषगुणमे विगता माग	३५	उत्पत्त्याग और उत्पत्त्यागके विषये	५८६
आयुष नामकम	५०३	उत्पत्त्याग और उत्पत्त्यागके विषये	३८७
आयुषी नामकम	४९७	उत्पत्त्याग	१०
आयुषाहार	५५१	उत्पत्त्यागमे माग विगता ?	३१
आयुषाहार नियम	५५२	उदय	३८८
आयुषावरी	७४१	उदयके भेद	३८९
आयुषावरी उपकरण	२१४	उदयवर्ण	३८९
आयुषावरी उपकरण निर्वृति	२१०	उदयवर्ण	३८९
आयुषम	४४३	उदयवर्ण	३८९
आयुषमके भेद	४७०	उदयवर्ण	३८९
आयुषम का उत्पत्ति विगता	५४५	उदयवर्ण	३८९
आयुषमकी आयाया	५५४	उदयवर्ण	३८९
आयुषमका नियम	५५३	उदयवर्ण	३८९

उपकरण (इन्द्रिय)	२१२	ऋजुमति मनःपर्यग	३१७
उपयोगके भेद	२१३	ऋजुमति-विपुलमति	
उपघात नाम कर्म	५००	में अन्तर	३१९
उपपाद जन्म	१८३	ए	
उपमा मान	२३	एक कालमें कितने योग	२७८
उपयोग	१९६	एक जीवके अधिकसे	
उपकरणके भेद	१९७	अधिक प्रदेसासत्त्व	५७५
उपयोग (इन्द्रिय)	२१८	एक समयमें एक जीवके कितने	
उपशम श्रेणी	१२१	कर्म परमाणु बँधते है	५३७
उपशम श्रेणिके गुणस्थान	१२२	एक समय में बँधे सभी कर्म-	
उपशम श्रेणिके गुणस्थानोंका		परमाणुओं की स्थिति क्या	
अन्तरकाल	४२७	समान होती है	५५०
अन्तरकालमें जीव संख्या	४०१	एकेन्द्रियके बयालीस भेद	१४५
उपशम सम्यक्त्व	३५४	एकेन्द्रियके गुणस्थान	२२७
उपशान्त कषाय गुणस्थान	१३३	औ	
उपशान्त कषाय गुणस्थानका		औदारिक काय योग	२५३
अन्तरकाल	४२७	औदारिक मिश्र काययोग	२५४
उपशान्त कषाय गुणस्थानमें बन्ध	६५५	औदारिक, औदारिककमिश्र	
उपशान्त कषाय गुणस्थानमें		काययोग किसके	२६०
बन्धव्यु०	६५७	औपशामिक सम्यक्त्वमें	
उपशान्त कषाय गुणस्थानमें		गुणस्थान	३७८
उदय	६८०	क	
उपशान्त कषाय गुणस्थानमें		करण	२
उदयव्युच्छिति	६८१	करणलब्धि	३६२
उपशान्त कषाय गुणस्थानमें सत्त्व	७०२	करणानुयोग	१
उपशान्त कषाय और क्षीण		कर्म	४३७
कषायमें अन्तर	१३५	कर्मके भेद	४३८
उपशमकरण	५९८	कर्मकी अवस्थाएँ	५३१
उपशमके भेद	५९९	कर्मका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध	५४१
उपशम भाव और उपशमकरणमें		कर्मका जघन्य स्थितिबन्ध	५४८
अन्तर	६०२	कर्मकी बन्धयोग्य प्रकृतियाँ	६०५
ऊ		कर्मकी उदययोग्य प्रकृतियाँ	६०६
ऊर्ध्वलोक	७३	कर्मकी सत्त्वयोग्य प्रकृतियाँ	६०७

कर्मभूमिज त्रियंशके तीस भेद	१४९	किस जीवके कितने प्राण	१९२
कर्मभूमि	६०	किस इन्द्रियका कैसा आकार	२२५
कर्मभूमि कितनी	६१	किन जीवोंके बोन रिग	१८६
कपाय	२८४	किन जीवोंके कितनी इन्द्रियाँ	२२६
कपायके भेद	२८५	किन जीवोंमें बोन वेद	२८३
कपायमें गुणस्थान	२८६	किस जीवका किस मरकमें जन्म	५८
कायक	७३८	किस जीवका किस स्वर्ग तक जन्म	८२
काय	२२८	कुम्भवधि ज्ञान	३२२
कर्मणका योग	२५९	कुम्भति ज्ञान	३२३
कर्मणका प्रयोग किमके	२६४	कुम्भुत ज्ञान	३२४
कामानुयोगमें किसका वाचन	२९३	कुम्भक संस्थान	४८१
किन गुणस्थानोंमें बोन ज्ञान	३२६	कृतकृत्यवेदक	३३४
किन गुणस्थानोंमें बोन संयम	३३७	केवलज्ञान	३२२
किन गुणस्थानोंमें बोन लेख्य	३४८	केवलदर्शन	३४४
किन गुणस्थानोंमें बोन दर्शन	३४९	केवलीके मनोयोग	२२१
किस गुणस्थानमें किस गुणस्थानमें		केवली समुत्पन्न क्यों	२७१
गमन	११८	केवली समुत्पन्नमें किना	
किस गुणस्थानमें मरण	१२९	समय	२७७
किस गुणस्थानमें मरकर		बोझाबोझी	३८
किस गतिमें गमन	१४०	क्षयक धेनी	१२३
किन अवस्थाओंमें मरण नहीं	१४१	क्षयक धेनीमें गुणस्थान	१९१
किस गतिमें कितने साम्यदर्शन	३८०	क्षयक धेनीमें जीव लक्षणा	४०१
किस गतिमें कितने गुणस्थान	२०४	क्षयक धेनीमें जन्मरक्षण	४१८
किन प्रवृत्तियों की बन्ध व्युत्पत्ति		क्षयोरदय लक्षि	३१७
उदयव्युत्पत्तिके परचात्	७०८	क्षयिक साम्यबन्ध	३१९
किन प्रवृत्तियों की बन्धक तादा		क्षयिक साम्यबन्धों उत्पत्तिके	
उदयव्युत्पत्ति एवं माय	७०९	बन्ध	३३०
किन प्रवृत्तियों की उदय व्युत्पत्ति		क्षयिक साम्यबन्धों के लक्षण	३४१
बन्धव्युत्पत्तिके परचात्	७१०	क्षयिक साम्यबन्धों के लक्षण	३४३
किन जीवोंके कितनी पर्याप्तियाँ	१६६	क्षयिक साम्यबन्धों के लक्षण	३४४
किस जन्मवालोही बोन योगि	१७७	क्षयिक साम्यबन्धों के लक्षण	३४५
किस योगिमें बोन उत्पन्न होता है	१७४	क्षयिक साम्यबन्धों के लक्षण	३४६
किन जीवोंके बोन जन्म	१८४	क्षयिक साम्यबन्धों के लक्षण	३४७

क्षीणकपाय गुणस्थान	१३४	घ	९
क्षीणकपाय गुणस्थान वन्ध	६५६	घन	१५
क्षीणकपाय गुणस्थान वन्धव्युच्छित्ति	६५७	घनशेवगल	१२
क्षीणकपाय गुणस्थान उदय	६८२	घनमूल	४१
क्षीणकपाय गुणस्थान उदय व्युच्छित्ति	६८३	घनलाक	४२
क्षीण कपाय गुणस्थान रात्त्व	७०३	घनांगुल	७९
क्षीणकपाय गुणस्थान सत्त्वव्युच्छित्ति	७०४	घातायुष्क	६०८
क्षेत्र अनुयोगमें किसका कथन	३९१	घातीकर्म	६०९
क्षेत्रफल	१४	घाती कर्मके भेद	६१२
क्षेत्र विपाको कर्म	६२५	घातीप्रकृतियां	२२२
क्षेत्र विपाकी प्रकृतियां	६२६	घ्राण इन्द्रिय	
ग		चक्षु इन्द्रिय	
गति	२०२	चक्षु दर्शन	२२३
गतिके भेद	२०३	चन्द्रमा परिवार	३४१
गति-नाम कर्म	४७२	चारित्र मोहनीय	९३
गन्ध नाम कर्म	४९४	चारित्र मोहनीयके भेद	४६२
गर्भजन्म	१८२	चार मोड़ेवाली गति क्यों नहीं होती	४६३
गुणकार	६	चारों क्षपकोंका काल	२७१
गुण प्रत्यय अवधि	३११	चारों क्षपकोंका कौन भाव	४२१
गुण प्रत्यय अवधि किसके	३१२	चारों उपशमकों का काल	४३६
गुणयोनिके भेद	१७५	चौबीस तीर्थकर	४२०
गुणस्थान	१०३	चौबीस तीर्थकरके जन्म स्थान	७०
गुणस्थानके भेद	१०४	चौबीस तीर्थकरके निर्वाण स्थान	७१
गुणस्थानके नामोंका करण	१०५	छेदोपस्थापना संयम	७२
गुणश्रेणि	७३२	ज	३३०
गुणहानि	५६६, ७३३	जगच्छ्रेणी	४३
गुणहानि आयाम	५६७	जगत्प्रतर	४४
गोत्र कर्म	४४५	जघन्य वर्ग	५६०
गोत्र कर्मके भेद	५२९	जघन्य वर्गणा	५६२
गोत्र कर्मका उत्कृष्ट स्थिति वन्ध	५४६	जघन्य स्थिति वन्ध किसके	५४९
गोमंत्रिका गति	२७०		

जन्मके भेद	१८०	दमनके भेद	३४०
जाति नाम कर्म	४७३	दमन कब होता है	३३९
जीव प्रकृत्याके भेद	१०२	दमन मोहनीय	४५६
जीवविपाको कर्म	६२७	दमन मोहनीयके भेद	४५७
जीवविपाकी कर्म कीलने	५२८	दमन मोहनी धारणाका	
जीवगमाय	१४२	प्राग्भन वहाँ	३७१
ज्योतिष्क देव	९४	दमन मोहनी धारणाका	
ज्योतिष्क देवकी आयु	९५	प्रस्थापक	३७२
ज्योतिष्क देवके भेद	९०	दमन मोहनी धारणाका	
ज्योतिष्क देव वहाँ रहने हैं	९०	निष्ठानक	३७३
ज्योतिष्क देवके विमानोका		दमन मोहनी धारणाका	
आकार	९२	निष्ठानन वहाँ	३७५
ज्ञान	२८७	दमनावरण कर्म	४४०
ज्ञान मार्गणाके भेद	२८८	दमनावरण कर्मके भेद	४४८
ज्ञानावरण कर्मके भेद	४३९	दमनावरण कर्मके अन्य स्थान	६३०
ज्ञानावरण कर्मके अन्धग्यान	६३९	दमनावरण कर्मके दो-	
त		प्रतिष्ठित अन्य स्थानका स्थानी	६३१
निर्यस्य वहाँ रहने है	९०	दमनावरण कर्मके अन्धग्यान	
निर्यस्य और मनुष्योंके वैशिष्ट्य		अन्य स्थानका स्थानी	६३२
दागीर केमे	६६२	दुर्भग नामकर्म	५३०
निर्यस्य और मनुष्योंका भूमि पर		दुर्भग नामकर्म	५३२
दमन विम कर्मके कारण	५०६	दोष दो भेद	१५३
निर्यस्य पक्षेन्द्रिकके भेद	१४८	दोष दो	६३
तीनों अवधि ज्ञान विमके	३१४	दोष विमके अन्धग्यान	६३३
तीर्थक्षुर नामकर्म	३३५	दोष विमके अन्धग्यान	
तीर्थक्षुर नाम कर्मका अन्य	६३५	अन्धग्यान	६३६
धन	३३०	दोष विमके अन्धग्यानके दोष	
धन माती	०	दोष विमके अन्धग्यानके दोष	
धन नामकर्म	५०७	दोष विमके अन्धग्यानके दोष	
धनका नामका गुण	३३	दोष विमके अन्धग्यानके दोष	
धनका नाम	३३	दोष विमके अन्धग्यानके दोष	
द		दोष विमके अन्धग्यानके दोष	
दमन	३३८	दोष विमके अन्धग्यानके दोष	

देशघाति कर्म प्रकृतियाँ	६१४	निद्रा	४५२
देशोपशम	३६६	निद्रानिद्रा	४४९
द्रव्य प्राण	१८९	निर्माण नामकर्म	५२७
द्रव्य प्राणके भेद	१९१	निर्वृत्ति (इन्द्रिय)	२०८
द्रव्य निक्षेपणका अर्थ	७४३	निर्वृत्ति के भेद	२०९
द्रव्यमानके भेद	२१	निर्वृत्त्यपर्याप्तक	१५५
द्रव्येन्द्रिय	२०७	निषेक	५५६
द्रव्येन्द्रियके भेद	१९१	नोकपाय	४६८
द्वितीय वर्गणा	५६३	नोकपायका स्वरूप	४६९
द्वितीय स्पष्टक	५६५	न्यग्रोध परिमण्डल	४७२

ध

प

धारणाज्ञान	२९४	पञ्च भागहार	५८९
ध्रुवबन्ध	७२२	पञ्चेन्द्रियके ४७ भेद	१४७
ध्रुवबन्धी प्रकृतियाँ	७४५	परघात नामकर्म	५०१
न		परिकर्माष्टक	३
नरकसे निकला जीव कहाँ जन्म लेता है	५६	परिधि	१६
नरकसे निकला जीव क्या नहीं होता	५७	परिधि और क्षेत्रफलका नियम	१७
नाना गुणहानि	५६८	परिहारविशुद्धि संयम	३३१
नामकर्म	४४४	परिहारविशुद्धि संयम किसके	३३२
नामकर्मके भेद	४७१	परोदयमें बँधनेवाली प्रकृतियाँ	७११
नामकर्मकी उत्तर प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध	५४३	पर्याप्त नामकर्म	५११
नारकियोंकी आयु	१५२	पर्याप्तक	१५४
नारकियोंके दो भेद	५५	पर्याप्तके गुणस्थान	१६७
नारकियोंके शरीरकी ऊँचाई	५५	पर्याप्ति	१५७
नाराच संहनन	४८९	पर्याप्तिके भेद	१५८
नित्य निगोद	२४३	पर्याप्तियोंके आरम्भ और पूर्णता-का क्रम	१६५
निकाचितकरण	६०४	पर्याप्ति और प्राणमें भेद	१९३
निधत्तिकरण	६०३	पल्य	२४
निरन्तरबन्धी प्रकृतियाँ	७१४	पल्यके भेद	२५
निरन्तरबन्ध और ध्रुवबन्ध में अन्तर	७१६	पाणिमुक्ता गति	२६८
		पापकर्मका स्वरूप	६१७
		पाप प्रकृतियाँ	६२०

पुद्गल विषयी स्वरूप	६२१	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे बन्ध-	
पुद्गल विषयी स्वरूप प्रकृतिषी	६२२	त्रैवली धर्मन प्रत्येक गुणस्थानी	
पूर्वके भेद	३०६	जीवने क्षेत्रवा स्वर्गन	४१२
पृथिवी वार्षिक	२३१	प्रसन्न और अममता संयुक्ता	
पुण्यदमका स्वरूप	६१८	बाण	४१९
पुण्य प्रकृतिषी	६२०	प्रसन्नमयन गुणस्थानवा	
प्रकृतिबन्ध	५३४	बन्धनर बाल	४२६
प्रकृतिबन्धके भेद	५३५	प्रसन्नमयन गुणस्थान	११३
प्रकृतिबन्धावसरण	७२४	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे	
प्रकृतिमत्त्व	५७३	चित्तने जीव	३९९
प्रचला	४५३	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे बन्ध	६४५
प्रचलाप्रचला	४५०	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे बन्ध	
प्रसन्नमोह	४४	बहुगुणता	६४६
प्रसन्नगुण	४१	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे उदय	६३०
प्रत्येक वनस्पति	२३५	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे	
प्रत्येक वनस्पतिके भेद	२३७	उदय बहुगुणता	६३१
प्रत्येक क्षरीर नामकम्	५१३	प्रसन्नमयन गुणस्थानमे बन्ध	६९५
प्रसाध्यानावरण	४६६	प्रसाध्याना	१२
प्रसाध्याना	७२६	प्रसाध्यानामे विषयक बन्ध	१३
प्रसाध्यानी	७४०	प्रसाध	११६
प्रसन्नमयनि	७२७	प्रसाधके भेद	११५
प्रसन्नमयन साम्यकत्व	३५५	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	१०१
प्रसन्नमयन साम्यकत्वकी प्राप्ति		प्रसन्नमयन साम्यकत्व	१०७
प्रसन्नमयन साम्यकत्व इत्यनेन	३५२	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	१०८
प्रसन्नमयन साम्यकत्व इत्यनेन	३५३	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	१०९
प्रसन्नमयन साम्यकत्वकी विधि		प्रसन्नमयन साम्यकत्व	११०
विधिसे धर्मि खटनेका वाक्य	१२६	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	१११
प्रसन्नमयन और प्रसन्नमयन		प्रसन्नमयन साम्यकत्व	११२
साम्यकत्वमे अन्तर	१०८	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	११३
प्रसन्नमयन	३६६	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	११४
प्रसन्नमयन	५७४	प्रसन्नमयन साम्यकत्व	११५

वादर नामकर्म
वादर और सूक्ष्मजीव
वारहवें दृष्टिवादके भेद

भ

भरत क्षेत्रमें परिवर्तन
भवप्रत्यय अवधि
भवप्रत्यय अवधि किसके
भवनवासी देव कहाँ रहते हैं
भवनवासी देवके भेद
भवनवासी देवकी आयु
भव-विपाकी-स्वरूप
भव-विपाकी प्रकृतियाँ
भव्यमार्गणाके भेद
भव्य-अभव्यका स्वरूप
भव्य-अभव्यके गुणस्थान
भागहार
भागहारोंका प्रमाण
भावप्राण
भाववेद किस गुणस्थान तक
भाववेद-द्रव्यवेदमें असमानता
भावानुयोगमें किसका कथन
भाषापर्याप्ति
भोगभूमि
भोगभूमि कितनी
भोगभूमिज तिर्यञ्चके भेद

म

मतिज्ञान
मतिज्ञानके भेद
मतिज्ञानके विस्तारसे भेद
मध्यलोक
मनुष्योंके नौ भेद
मनुष्य कहाँ रहते हैं
पर्याप्ति

५०९	मनःपर्यायज्ञान	
२४५	मनःपर्यायज्ञानके भेद	३१५
३०५	मनःपर्याय किसके	३१६
६७	मनोयोगमें गुणस्थान	३२०
३०९	मानके भेद	२५०
३१०	मार्गणा	१८
८२	मार्गणाके भेद	२००
८४	मिथ्यात्व गुणस्थान	२०१
८६	मिथ्यात्व गुणस्थानमें बन्ध	१०६
६२३	मिथ्यात्व गुणस्थानमें बन्धव्यु०	६३४
६२४	मिथ्यात्व गुणस्थानमें उदय	६३६
३४९	मिथ्यात्व गुणस्थानमें उदयव्यु०	६५९
३५०	मिथ्यात्व गुणस्थानमें सत्त्व	६६०
३५१	मिथ्यादृष्टी जीवोंका क्षेत्र	६८८
७	मिथ्यादृष्टी जीवोंका स्पर्शन	४०५
५९७	मिथ्यादृष्टी जीवोंका अन्तर	४०७
१९०	मिथ्यादृष्टी जीवोंकी संख्या	४२३
२८२	मिथ्यादृष्टी जीवोंका काल	३९७
२८१	मिथ्यादृष्टी जीवोंका कौन	५१३
३९५	भाव	
१६३	मिथ्यात्व कर्म	४३०
६२	मिश्र गुणस्थान	४६१
६३	मिश्र गुणस्थानमें बन्ध	१०९
१५०	मिश्र गुणस्थानमें बन्धव्यु०	६३९
	मिश्र गुणस्थानमें उदय	६४०
	मिश्र गुणस्थानमें उदयव्यु०	६६३
२८९	मिश्र गुणस्थानमें सत्ता	६६५
२९०	मिश्र गुणस्थानकी विशेषता	६९०
२९५	मोहनीय कर्म	११०
५९	मोहनीय कर्मके भेद	४४२
१५१	मोहनीय कर्मकी उत्तर प्रकृतियोंमें	४५५
१७०	उत्कृष्ट स्थितिबन्ध	
१६४	यथाख्यात संयम	५४२
	य	

यशःकीर्ति नाम	५२५	यज्जनाराय संहनन	४८८
योग	२४७	यनस्पतिवायके भेद	२३४
योगके भेद	२४८	वर्ग	८
योगन	३६	वर्गणा	५६१
योगि	१७१	वर्गभूल	१०
योगिके भेद	१७२	वर्ण नामवार्म	४९३
योगि और जन्ममें अन्तर	१७८	वातवल्ग	९७
र		वामन संस्थाननाम	४८२
रमना इन्द्रिय	२२१	विकल्पेन्द्रियके नौ भेद	१४६
रग नामवर्म	४९५	विग्रहगति	२६५
राज	४६	विग्रहगतिके भेद	२६६
ल		विग्रहिलिचि	३५८
रक्षि	२१७	विस्तारमे जीवगमाग	१४४
रक्षिणी बिलनी	३५६	विस्तारमे योगिके भेद	१७९
रक्ष्यपर्याप्तक	१६६	विहारयत्नस्थान आदिवा	
रक्ष्यपर्याप्तकके गुणग्यान	१६९	अभिप्राय	४०९
रक्ष्यपर्याप्तकके बिलने जन्म	१७०	वेद	२९७
रक्ष्यपर्याप्तकका जन्म	१८५	वेदके भेद	२८०
रोगलिखा गति	२६९	वेदक गम्यकन	१६५
रोग्या	२८६	वेदक गम्यकनकी स्थिति	१६८
रोग्याके भेद	२८७	वेदना समुदाग आदिवा स्थान	२३४
रोग	४७	वेदनीय वर्म	४४१
रोगका आवार	५०	वेदनीय वर्मके भेद	४४४
रोगकी ओटाई आदि	५१	वेदनीय वर्मकी उत्तर अङ्गुली	
रोगके भेद	५२	उत्कृष्ट स्थितिद य	५४४
रोग कहा स्थित है	४८	विनृलमति मनःपद	११८
रोगको बिलाने रक्षा	४९	विहारोर्णन नामवर्म	५०५
रोगोत्तर मानके भेद	२०	वेदियक बाधनाग	२२५
रोगान्तिव देव	८०	वेदियक मिथवा०	३२६
रोगिक मान	१९	वेदियक और वेदिक निधन	२६१
र		विमर्श	
रक्षणयोगमे सुकरधान	२४२	अन्तर देखोरे केद	८७
रक्षणयोगमे सुकरधान सहनन	४८७	अन्तर कहा स्थित है	८८

व्यन्तरोकी आयु	८९	संयम मार्गणाके भेद	३२८
व्यवकलन	५	संयमासंयम	३३५
व्यवहारपत्य	२६	संयतासंयत जीवोंका काल	४१८
व्यास	१६	संयतासंयत जीवोंका स्पर्शन	४११
व्युच्छिति	६३३	संयतासंयत आदि गुणस्थानोंमें	
श		जीव संख्या	३९८
शरीरअंगोपांग नाम	४८४	संयतासंयत जीवोंका कालमें भाव	४३४
शरीर नामकर्म	४७४	संस्थान नाम और आनुपूर्वी नाममें	
शरीरपर्याप्ति	१६०	अन्तर	४९८
शरीरबन्धन नामकर्म	४७५	संहनन नामकर्म	४८६
शरीर संघात नामकर्म	४७६	सकल प्रत्यक्ष	३२१
शरीर संस्थान नामकर्म	४७७	सचित्त योनि आदिका स्वरूप	१७६
शरीरमें अंग उपांग	४८५	सत्त्व अथवा सत्ता	५७१
शुभ नामकर्म	५१७	सत्त्व अथवा सत्ताके भेद	५७२
श्रुतज्ञान	२९७	सत्प्ररूपणामें कथन	३८९
श्रुतज्ञानके भेद	२९८	सत्त्व मनोयोग आदिका स्वरूप	२४९
श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति	१६२	सदवस्था रूप उपशम	६०१
श्रेणि चढ़नेका अभिप्राय	१२०	सम्यक्त्व	३५२
श्रेणि चढ़नेका पात्र	१२५	सम्यक्त्व मार्गणाके भेद	३५३
श्रोत्र इन्द्रिय	२२४	सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान (मिश्र)	
स		का अन्तरकाल	४२५
संकलन	४	सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान जीवोंका	
संक्रमण	५८७	काल	४१५
संक्रमणके नियम	५८८	सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें भाव	४३२
संक्षेपमें जीवसमास	१४३	सम्यग्मिथ्यादृष्टि और असंयत	
संख्यामानके भेद	२२	सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका स्पर्शन	४१०
संख्या अनुयोगमें कथन	३९०	सयोग केवली गुण०	१३६
संज्वलन कषाय	४६७	सयोग केवली गुण०का काल	४२२
संज्ञा	१९४	सयोग केवली गुण०का अन्तरकाल	४२९
संज्ञाके भेद	१९५	सयोग केवली गुण०जीवोंकी संख्या	४०३
संज्ञी	३८१	सयोग केवली गुण० बन्ध	६५६
संज्ञीके गुणस्थान	३८२	सयोग केवली गुण० बन्धव्यु०	६५७
संयम	३२७	सयोग केवली गुण० उदय	६८४

संयोग केवली गुण० उदयव्यू०	६८१	सामाजिक संयम	३२९
संयोग केवली गुण० सत्त्व	७०१	सामादन गुणस्थान	१०७
संप्रतिष्ठित प्रत्येक	२२८	सामादन गुणस्थान बन्ध	६१७
संप्रतिष्ठित असंप्रतिष्ठितको पहचान	२४०	सामादन गुणस्थान बन्धव्यू०	६१८
सम्पूर्ण जन्म	१८	सामादन गुणस्थान उदय	६६१
समुद्धान	२७२	सामादन गुणस्थान उदयव्यू०	६६२
समुद्धानको भेद	२७३	सामादन गुणस्थान मरव	६८९
समी केवली क्या समुद्धान		सामादन गुणस्थान भाव	४४१
करते है	२७६	सामादन गुणस्थान रिपान	४०८
सम्पन्न प्रकृति	४४८	सामादन गुणस्थान काल	४४४
सम्पन्न प्रकृतिका नाम सम्पन्न		सामादन सम्पन्नद्वी आदि प्रत्येक	
कपो	४१९	गुणस्थानबाले बिलने क्षीरसे	
सम्पत् मिथ्यात्वकर्म	४६०	रहते है	४०६
समक्षगुरु सत्यान मास	४७८	सामादनमे सज्जानसदनक प्रत्येक	
समय प्रवृत्तता स्वभाव और प्रमाण	४१८	गुणस्थानमे जीव संख्या	४९८
समय प्रवृत्तता विभाग	४१९	मिष्टाका शेष	९६
समं संक्रमण	५०६	गुणम नामकर्म	४१९
सर्वमाना	६१७	गुणम नामकर्म	४२१
सर्वमाना प्रकृतिया	६१३	गुणम जीव	४११
साक्षीपक्ष	६६७	गुणम नामकर्म	४१०
सहस्रार स्वयं सच ही कुछ अधिक		गुणम साक्षीपक्ष कर्म	४११
आमु होनेका कारण	७८	गुणम साक्षीपक्ष कु०	४१३
साक्षार उपयोग	१०८	गुणम साक्षीपक्ष कु० साक्षीपक्ष	४१३
साक्षर	१७	गुणम साक्षीपक्ष कु० साक्षी	४१३
साक्षिपक्ष अप्रमाण	११९	गुणम साक्षीपक्ष कु० साक्षीव्यू०	४१६
साधारण बलवर्धन	६६६	गुणम साक्षीपक्ष कु० साक्षी	४१७
साधारण बलवर्धन भद्र	६६७	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७
साधारण बलवर्धनका विभाग	६६९	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७
साधारण कारण मास	६६७	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७
साक्षिपक्ष	७६०	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७
साक्षर निरवयववर्धी प्रकृतिया	७१९	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७
साक्षरवर्धी	७१९	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७
साक्षरवर्धी प्रकृतिया	७१७	गुणम साक्षीपक्ष कु० उदयव्यू०	४१७

स्यावर और त्रसोंके गुणस्थान	२४६	स्पर्दक	५६४
स्थितिकाण्डक	७२६	स्वस्थान अप्रमत्त	११८
स्थिति काण्डक आयाम	७२७	स्वर्गसे चगकर निर्वाण जानेवाले	
स्थिति और अनुभागका अपकर्षण	५८५	देव	८१
स्थिति और अनुभागका उत्कर्षण	५८३	स्वर्गमें जन्म व मरणका अन्तर	७५
स्थितिबन्ध	५४०	स्वर्गमें देवोंकी आयु	७७
स्थितिबन्धापसरण	७२५	स्वर्गमें देवांगनाओंकी आयु	७६
स्थिति रचनाकी अपेक्षा निपेकोंमें		स्वर्गमें देवांगनाओंकी उत्पत्ति	७४
द्रव्यका प्रमाण लानेकी विधि	५७०	स्वोदयमें बँधनेवाली प्रकृतियाँ	७१२
स्थितिसत्त्व	५७६	स्वोदय और परोदयमें बँधनेवाली	
स्थिर नामकर्म	५१५	प्रकृतियाँ	७१३
स्पर्शन इन्द्रिय	२०	ह	
स्पर्शन अनुयोगका नियम	३९२	हुण्डक संस्थान नाम	४८३
स्पर्श नामकर्म	४९६	हुण्डावसर्पिणीके चिन्ह	८६

